CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

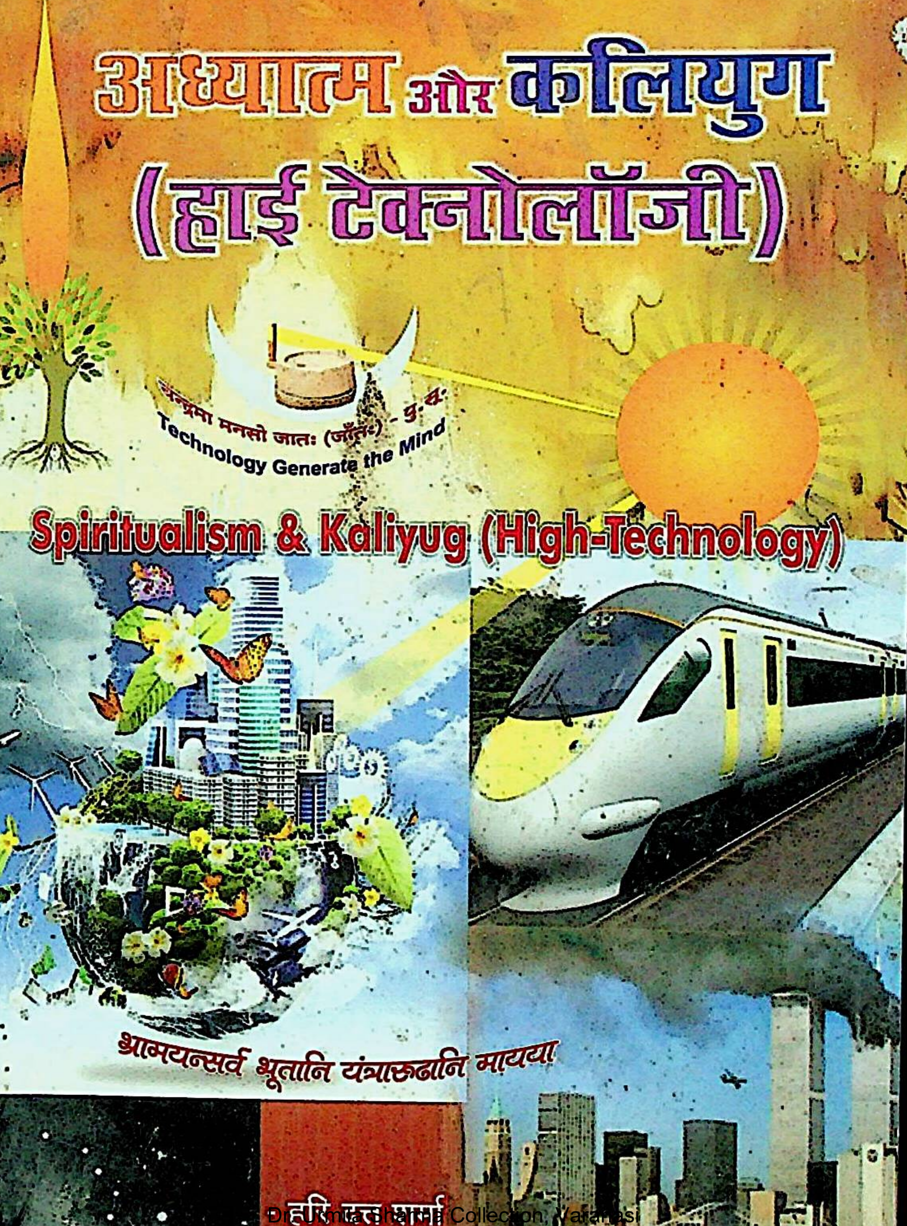

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आदरणीय
सुश्री उर्मिला शर्मा जी
को सादर –

[illegible signature]
17-11-2020

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अध्यात्म और कलियुग (हाई-टेक्नोलॉजी)

Spiritualism & Kaliyug (High-Technology)

हरि दत्त शर्मा
प्राध्यापक (अव. प्राप्त) राज. विज्ञान
महाराज बलवन्त सिंह पी. जी. कालेज
गंगापुर, वाराणसी

राजनीतिक अकादमी, वाराणसी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अध्यात्म और कलियुग (हाई-टेक्नोलॉजी)
Spiritualism & Kaliyug (High-Technology)

लेखक : हरि दत्त शर्मा

राजनीतिक अकादमी, वाराणसी (प्रकाशन)
9 कीर्ति नगर, करौंदी, वाराणसी-221005
मो. 09454893409

© लेखकाधीन

प्रथम संस्करण 2015

मूल्य : ₹ 90/-

शब्द संयोजन : अजय शर्मा
मो. 8601645354

मुद्रक : हिन्द प्रिन्टिंग वर्क्स
भदैनी, वाराणसी
मो. 9838289377

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विषय-सूची

भूमिका i
1. अध्यात्म का स्वरूप 1
2. स्वभावो अध्यात्म उच्यते 3
3. परमात्मा का स्वरूप 4
4. पिण्ड ब्रह्माण्ड का स्वाराज्य 7
5. राजा (शासक) का शास्त्रीय स्वरूप 8
6. लोक राज्य का अध्यात्म 9
7. राज्य-शरीर, पीपल और People 11
8. लोकयात्रा का अध्यात्म 14
9. अध्यात्म का आकर्षण 16
10. गलत दिशा में अध्यात्म की खोज 18
11. मानवीय गरिमा का पतन 20
12. खाली मन शैतान का घर 21
13. टेक्नोलॉजी का मायाजाल 25
14. टेक्नोलॉजी का गणपति स्वरूप 27
15. यम-नियमों की सार्वभौमिकता 29
16. अध्यात्म विद्या और टेक्नी विद्या 31
17. विज्ञान और कलियुग 33
18. वैज्ञानिकों का पाखण्डी ज्ञान 34
19. अध्यात्मिक राज्य और लोक कल्याणकारी राज्य 35
20. हाई-टेक्नोलॉजी का कलियुग से सम्बन्ध 38
21. अध्यात्म और राजनीति 39
22. मानव और दैत्य राज्यों में अन्तर 40
23. शरीर-राज्य और लोक-राज्य में समानता 42
24. कलियुग (हाईटेक) के शासक 46
25. कलियुग का टेक्नी स्वरूप 48
26. हाई-टेक (कलियुग) की भविष्यवाणी का सच 49
27. चार वेदों की टेक्नोलॉजी का रहस्य 50
28. व्यासावतार - वामनावतार का विज्ञान 52
29. नियंत्रित यांत्रिकी की आवश्यकता 53
30. सम्पूर्ण और पाखण्ड 55
31. राक्षसों की प्रिय हाई टेक्नोलॉजी 55
32. विज्ञान की भाषा में कलियुग 58
33. महाभारत में विश्व युद्ध 59
34. कल्कि अवतार टेक्नोलॉजी 60
35. हाईटेक, हाई प्रोडक्शन और हाई कन्जंप्शन 63
36. सभी राष्ट्रों के नामों का समान अर्थ 64
37. कृष्ण की रासलीला का विज्ञान और संयुक्त राष्ट्र 66
38. संस्कार और देवासुर-संग्राम 68
39. संस्कार और धन 70
40. धन के अतिरेक का ताण्डव 71
41. सत्ता पाई काह मद नाही 73
42. सत्तामद और अत्याचार का वैज्ञानिक रहस्य 74
43. पुनर्जन्म और मध्यम मार्ग 75
44. राज्य होने पर भी अराजकता क्यों ? 79
45. योगियों का भ्रम 82
46. संतों और योगियों से आशा (महत्त्व) 85
47. योग और संयुक्त राष्ट्र 88
48. लेखन का सार 92

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भूमिका

यह पुस्तक अध्यात्म और कलियुग (हाई-टेक्नोलॉजी) एक दीर्घ कशमकश के परिणाम स्वरूप इस रूप में आयी है । इसका इतिहास बहुत लम्बा है । इस पुस्तक ने बहुत से उतार-चढ़ाव देखें हैं । सन् 1950 से जिस रहस्यमय अध्यात्म को मैं ढूंढ रहा था, उसकी परिणति यह पुस्तक है ।

तब से अब तक कभी भी मुझे उस अज्ञात रहस्य ने शांत नहीं रहने दिया। अब मैं कह सकता हूँ कि यह लेखन उस रहस्य का भेदन करता है जिसे पाने और जानने के लिये समस्त संसार लालायित है ।

इस पुस्तक के आधार को मेरी पूर्व पुस्तकों में देखा जा सकता है । उन्हें पढ़े बिना यह लेखन अधूरा लगेगा । अध्यात्म के स्वरूप का अधिकांश विवेचन पूर्व में लिखी पुस्तक ''अध्यात्म, विज्ञान, राजयोग = स्वराज'' में किया गया है। यह पुस्तक उसी के कुछ अंशों का विस्तार है । अतः भूमिका के लिये उसे भी पढ़ना उचित होगा ।

यह पुस्तक बहुत संक्षिप्त है फिर भी इसमें सूत्र रूप में अध्यात्म के स्वरूप को स्पष्ट कर दिया है । विश्व क्यों बेचैन है ? उसके कारण और निवारण के उपाय भी बताये गये हैं । यह पुस्तक सम्पूर्ण वैदिक साहित्य का सार है जिसका भेदन करना बहुत कठिन रहा है । इसमें उन सभी धर्मों के ग्रन्थों का भी सार है जो विश्व में प्रचलित हैं । अब प्रत्येक शास्त्रीय ग्रन्थ के रहस्य का वैज्ञानिक विवेचन किया जा सकता है, इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है ।

इसका लाभ तभी सामान्य व्यक्ति तक पहुँच सकता है, जब विश्व के पंडित, वैज्ञानिक और टेक्नोलॉजिस्ट यह जानेंगे कि अध्यात्म और शांति में कोई भेद नहीं है । शांति प्राप्ति के उपाय क्या हैं ? इसका वर्णन इस पुस्तक में किया गया है । आध्यात्मिक शांति किसी एक व्यक्ति से प्राप्त नहीं की जा सकती है । यह इसलिए कि अशांति की उत्पत्ति संस्थागत है । अतः संस्थाएँ ही इसे रोक भी सकती हैं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संस्थाओं में सबसे प्रमुख राज्य है। जब तक राज्यों द्वारा अध्यात्म को अपना आवश्यक अंग स्वीकार नहीं किया जायेगा, शांति, सुख, संतोष, आत्मविश्वास,निर्भयता आदि मनुष्य के लिए दुलर्भ बनी रहेंगी। यदि आज इस अशांति को कोई रोक सकता है तो वह है – संयुक्त राष्ट्र । यह तभी सम्भव है जब इसके सदस्य-देश प्रत्येक क्षेत्र में अपने अतिवादी दृष्टिकोण और क्रियाओं को मध्यम मार्ग की ओर ले जाने के लिये तत्पर हों । मध्यम मार्ग की मर्यादाओं को बनाये रखने के लिये ही अध्यात्म अर्थात् शरीर-यांत्रिकी (body technology) का सांगोपांग अध्ययन आवश्यक बताया गया है । इसके अतिरिक्त शांति लाने का अन्य कोई मार्ग नहीं है, यही सभी शास्त्रों का निष्कर्ष है ।

अनियंत्रित कलियुग अर्थात् हाई टेक्नोलॉजी के पक्षधर जो सोचते हैं कि हाईटेक ही सब रोगों की रामबाण औषधि है, वे स्वयं के द्वारा उत्पन्न हाई टेक्नोलॉजी के 'भस्मासुरी' भ्रमजाल में फँस चुके हैं । ऐसे दैत्य मनों से संपृक्त वैज्ञानिकों को गीता की इस रहस्यमयी चेतावनी को ध्यान से सुनना चाहिये –

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि ग्रन्त्रारूढानि मायया ।। (गी0 18/61)

हे अर्जुन! ईश्वर ने सभी भूतों (जीवों) को स्वचालित सर्वोत्तम हृदय यांत्रिकी में बैठा रखा है । ये सभी इसी हाई यां सुपर टेक्नोलॉजी (यांत्रिकी) से भ्रमित हैं अर्थात् इसी को सच समझ रहे हैं । उन्हें मेरी हाई टेक्नोलॉजी से उत्पन्न माया का ज्ञान नहीं है । यहाँ पर भ्रामयंन् के दो अर्थ हैं, भ्रमित होना भी है और इसीको सच मानकर घूमने (ऋग्वेद 7/41/2) का आनंद लेना भी है । इसके आगे की व्याख्या विद्वानों को स्वयं कर लेनी चाहिये कि कृष्ण क्या संदेश दे रहे हैं ? यह तभी स्पष्ट होता है जब हम सम्पूर्ण शरीर ब्रह्माण्ड की टेक्नोलॉजी से परिचित होते हैं ।

दिनांकः 31-05-2015

हरिदत्त शर्मा
प्राध्यापक (अव. प्राप्त)
9 कीर्तिनगर, करौंदी
वाराणसी-221005

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अध्यात्म और कलियुग (हाई-टेक.)

1. अध्यात्म का स्वरूप - अध्यात्म को जानने से पूर्व हमें 'मनुष्य' को जानना पड़ता है । मनुष्य को जानने के पूर्व हमें मंदिर, चर्च और मस्जिद तथा अन्य धर्मों के पूजा-स्थलों के वैज्ञानिक, भौतिक एवं मानसिक-स्वरूप का ज्ञान रखना पड़ता है। शास्त्रों और अध्यात्म में मानव-शरीर' को ही मंदिर, चर्च और मस्जिद आदि कहा जाता है, जो इस रहस्य को नहीं जानता है वह शास्त्र, अध्यात्म और विज्ञान को भी नहीं जानता है? जो शास्त्र, अध्यात्म और विज्ञान को नहीं जानता है, वह 'मन' के रहस्य को भी नहीं जानता है । अतः शरीर ब्रह्माण्ड में 'मन' की उत्पत्ति कैसे होती है, उसे जानना होता है । 'मन' ही वह 'तत्त्व' या 'व्यक्तित्व' है जिसके द्वारा प्रत्येक प्राणी चेतनामय होता है । जब हम मन को जानना चाहते हैं, तो सम्पूर्ण शरीर-ब्रह्माण्ड (पिण्ड) की रचना और उसकी कार्य प्रणाली को जानना और समझना आवश्यक होता है ।[2] यह रचना शास्त्रों के बहुत से रहस्यों को खोलने का प्रयास है । अतः यह बताना आवश्यक है कि शास्त्रों में जिस सृष्टि रचना की बात कही जाती है, उसका आधार यही शरीर

---

1. शरीरं खलु धर्म साधनं । दूसरा सूत्र है - शरीरं व्याधि मंदिरम् । (शरीर से ही धर्म की साधना (प्राप्ति) होती है । शरीर रोगों का मंदिर है ।) प्राणी शरीर दैविक, दैहिक और भौतिक व्याधियों से ग्रस्त रहता है । शरीर की इन व्याधियों का निवारण करना ही धर्म अर्थात् 'मनुष्य' का कर्तव्य है ।

2. अध्यात्म क्या है? युधिष्ठिर के पूछने पर भीष्म कहते हैं - "आचार्यों ने सृष्टि और प्रलय की व्याख्या के साथ अध्यात्म ज्ञान का विवेचन किया है, जिसे जानकर मनुष्य इस संसार में सुख और प्रसन्नता का भागी होता है......।" वह अध्यात्म ज्ञान समस्त प्राणियों के लिये हितकर है- महाभारत, शांतिपर्व, 194/1,4 ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होता है । इसी शरीर के भौतिक और अभौतिक (मानसिक या वैचारिक) स्वरूप में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की कल्पना कर ली जाती है - यत् पिण्डे तत् ब्रह्माण्डे, यत् ब्रह्माण्डे तत् पिण्डे । इसी शरीर में समस्त जड़ और चेतन, सभी वस्तुओं और प्राणियों (जीव व पशु-पक्षी जगत) की कल्पना कर ली जाती है । जब तक हम इस रहस्य को नहीं जानते हैं, हम शास्त्र, अध्यात्म, और विज्ञान को समझ नहीं सकते हैं । इसी अर्थ में हमने यहाँ पर 'शरीर-ब्रह्माण्ड' शब्द का प्रयोग किया है, जिससे बाहरी ब्रह्माण्ड का भ्रम न हो ।

प्रत्येक शरीर के भीतर 'मन' या चैतन्य सत्ता ज़िस तत्त्व से बनती है, उसे 'आत्मा' कहते हैं । आत्मा शरीर के भीतर बसती है । इस आत्मा को सदा जाग्रत बनाये रखने के लिये शरीर के बाहर से ऐसे तत्त्वों (पदार्थों) की आवश्यकता होती है, जो आत्मा के बल को बढ़ाते रहते हैं । उस चेतन शक्ति को सदा जाग्रत किये रहते हैं । इसी कारण 'अग्नि' में ही 'यज्ञ' किये जाते हैं । 'यज्ञ' को 'जज्ञ' भी कहते हैं । जज्ञ वह क्रिया है, जो प्राणी के शरीर की चेतना (अग्नि) को जाग्रत बनाये रखती है । भारत में जो बाहरी 'यज्ञ' लोगों द्वारा किया जाता है, वह इसी शाश्वत यज्ञ का प्रतीक मात्र है । यह उन सम्पूर्ण क्रियाओं का विज्ञान है, जिसके द्वारा यह सम्पूर्ण शरीर-ब्रह्माण्ड जागता रहता है अर्थात् क्रियाशील बना रहता है ।[1] 'यज्ञ', विज्ञान के वे सूत्र हैं, जिसमें जन्म, जीवन और मोक्ष (मृत्यु) का विज्ञान समाया हुआ है । यदि कोई इस विज्ञान को समझना ही नहीं चाहता है, तो इसमें प्रतीकात्मक 'यज्ञ' या शास्त्रों का क्या दोष है ?

---

1. भारत के अनेक क्षेत्रों में ग्रामवासियों द्वारा जो सामूहिक 'यज्ञ' किये जाते हैं, उन्हें 'जागरण' या 'जागर' कहा जाता है । कहीं-कहीं इसे 'रतजगा' भी कहते हैं । रात्रि अर्थात् अन्धकार किस प्रकार प्रकाश (जगा, जागृति) में परिवर्तित होता है, यह उसी का ज्ञान और विज्ञान है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आत्मा के बल में वृद्धि करने या उसको जाग्रत बनाये रखने के लिये जो द्रव्य बाहर से शरीर के भीतर पहुँचता है, उसीको 'परमात्मा' कहते हैं। 'पर' का अर्थ है 'शरीर से परे' अर्थात् बाहरी लोक में उत्पन्न द्रव्य ही सबसे श्रेष्ठ होता है। इसी अर्थ में इसे 'परम्' कहते हैं, इस परम् के ऊपर अन्य कुछ भी नहीं होता है, इस प्रकार 'जीव' की 'आत्मा' 'परमात्मा' से ही बनती है या उसका विकार है। विकार का, बाहर से शरीर के भीतर प्रविष्ट द्रव्य का बल, ऊर्जा, मन, इच्छा, बुद्धि में विस्तार होना है। महाभारत शांति पर्व (अ0 318/78) में ऋषि याज्ञवल्क्य राजा जनक से कहते हैं - "परमात्मा भिन्न है और जीवात्मा भिन्न; क्योंकि परमात्मा जीवात्मा का आश्रय है; परन्तु ज्ञानी, संत, महात्मा, उन दोनों को एक ही देखते और समझते हैं।"

इस कथन का अर्थ है कि सामान्य दृष्टि में आत्मा और परमात्मा, दोनों अलग-अलग हैं, क्योंकि परमात्मा से ही जीवात्मा का निर्माण होता है तथा आत्मा उस परमात्मा के आश्रय में रहकर ही चैतन्य रहती है। संत, ज्ञानी और विज्ञान को जानने वाले इस भेद को न मानकर आत्मा और परमात्मा को एक ही मानते हैं या कहते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि शरीर में जाकर यही परमात्मा जीव की चेतनाशक्ति में परिवर्तित होकर उसे बल, आशा, उत्साह, मन, बुद्धि आदि में स्वयं को परिवर्तित कर लेता है। अतः दोनों में कोई भेद या भिन्नता नहीं है। इसी दृष्टि को वैज्ञानिक, व्यापक या अध्यात्म की दृष्टि कहा जाता है।

2. स्वभावो अध्यात्म उच्यते - अध्यात्म दृष्टि का अर्थ आत्मा का परमात्मा की अधीनता या आश्रय में रहना और पुनः उसीमें विलीन हो जाने का स्वभाव है। आत्मा और परमात्मा के इसी स्वभाव को गीता (8/3) ने 'स्वाभावो अध्यात्म उच्यते' कहा है। आत्मा या मन का पुनः-पुनः परमात्मा के सानिध्य में रहने की प्रवृत्ति का नाम 'स्वभाव' है। शास्त्रों ने अध्यात्म के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस चक्र (जन्म, जीवन, मरण) को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में भी विभाजित किया है । इसका अर्थ होता है, यह चक्र परमात्मा के स्वभाव में पहले से विद्यमान होता कोई मनुष्य या प्राणी इस व्यवस्था या चक्र का निर्माण नहीं करता है । इसी स्वभाव को गीता (5/14) में अविद्या स्वरूपिणी माया कहा गया है (शांकर भाष्य) । यहाँ पर माया का अर्थ द्रव्य या पदार्थ मे निहित स्वयं का भाव या इच्छा है, जो विस्तार चाहती है । द्रव्य या पदार्थ का अर्थ स्थूल द्रव्य में निहित वह सूक्ष्म अण, अग्नि के सभी सूक्ष्म प्रकार हैं, आज विज्ञान जिन्हें परमाणु, आयन, प्रोटोन, इलेक्ट्रान, अदृष्य रश्मि, क्वार्क आदि कहता है । 'माया' को अविद्या इसलिये कहा जाता है कि वह स्वतंत्र या मुक्त ऊर्जा या चेतना को एक शरीर (घट) में बाँधकर उसे चैतन्य बना देती है । इस चैतन्य में स्थित जीव जब पिण्ड शरीर के मायाजाल से थक जाता है, तो वह इस पिण्ड शरीर से मुक्त होना चाहता है । इसी अर्थ में शरीर के बंधनों से मुक्त होने के ज्ञान और विज्ञान को 'विद्या' कहा गया है - "सा विद्या या विमुक्तये"।

3. परमात्मा का स्वरूप-अध्यात्म को शरीर भी कहा जाता है। इस शरीर से ही जीव सुख-दुःख से प्रभावित होता है। शरीर व्याधियों से ग्रस्त होकर जीव की शांति को समाप्त कर देता है। व्याधियाँ जीव (प्राणी) के ज्ञान-विज्ञान, मन, बुद्धि को विचलित कर देती है। अतः शरीर को स्वस्थ रखने के लिये जो भी कर्म किये जाते हैं, उन्हें भी 'अध्यात्म' ही कहा जाता है। यह शरीर, उसकी भीतरी ब्रह्माण्ड यांत्रिकी और शरीर के बाहर का ब्रह्माण्ड भी अध्यात्म है। इसीको शास्त्रीय या परंपरागत अध्यात्म कहा जाता है। इसका मूल उद्देश्य 'स्वाराज्य' (स्वराज) स्थापित करना होता है। इसका वर्णन 'तैत्तिरीय उपनिषद' में किया गया है।

तैत्तिरीय उपनिषद 1/6/1 में मनोमय पुरुष की स्थिति का वर्णन है। इसका अर्थ है, शरीर में 'मन' आवश्यकताओं या इच्छाओं (काम) के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्पन्न होने की सूचना देता है। इसके पश्चात् इन आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु मन, बुद्धि और चक्षु आदि को शरीर से बाहर के सूर्यलोक में पहुँचा देता है। इसके पश्चात् 'इन्द्रयोनि' अर्थात् रजोगुण (राजयोग) के द्वारा प्राणी का शरीर ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों की सहायता से ब्रह्मरूप (आहार) को प्राप्त कर लेता है। (तै. उ.1/6/2)।

शरीर स्थित रजोगुण (क्रिया, कर्म) द्वारा जिस ब्रह्मणि (अन्न में संघनित ऊर्जा) या पोषक अग्नि को प्राप्त किया जाता है, वही 'स्वाराज्य' कहा गया है, क्योंकि इसीसे शरीर राज्य की व्यवस्था (अनुशासन, विधि-पालन) एक राज्य की तरह क्रियाशील हो जाती है। (वह मन) स्वराज्य को प्राप्त करता है, तो वही मन के स्वामी (राजा, शासक) को भी प्राप्त कर लेता है। इससे वह वाणी का स्वामी हो जाता है, नेत्रों का स्वामी, कानों का स्वामी और विज्ञान का स्वामी हो जाता है। यह सब पूर्व में बताये गये साधन अन्न ब्रह्म की प्राप्ति या राज्य की उत्पत्ति से प्राप्त होते हैं (तै.उ.1/6/3)।[1]

आगे इसी अन्न ब्रह्म को आकाश ब्रह्म कहा है, ऋग्वेद में इसे 'ऋचा अक्षरे परमेव्योमन्' कहा है) । आकाश ब्रह्म इसलिये कहा है, क्योंकि यह आकाशरूपी सामूहिक मन की सभी इच्छाओं की पूर्ति कर देता है । सत्य स्वरूप अर्थात् दिखाई देने वाला (प्रत्यक्ष) होता है । यह इन्द्रियों को विश्राम देने वाले प्राणारामम् अर्थात् प्राण का उसी ब्रह्म (ऊर्जा) स्वरूप में रम जाना है । इस ब्रह्म से शांति और समृद्धि की स्थापना हो जाती है, क्योंकि यह आकाश का स्वरूप होने से सर्वत्र व्याप्त होता है। अतः शरीर में राजा या राज्य व्यवस्था स्थापित हो जाने से शांति उत्पन्न हो जाती है, अराजकता

1. तैत्तिरीय उपनिषद् (1/6/1-3) की यह विवेचना शाब्दिक नहीं है । स्थान के अभाव में यहाँ पर मूल मंत्र नहीं दिये जा रहे हैं । जिज्ञासु विद्वान् उपनिषद् देख सकते हैं । यह व्याख्या उपनिषद्, पुराण और महाभारत आदि में कहे गये शरीर के विज्ञान स्वरूप (क्रियात्मक यांत्रिकी) के अनुरूप की गयी है, अतः इसके गलत होने का प्रश्न ही नहीं उठता है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की समाप्ति हो जाती है। यह अन्न ब्रह्म ही अमृत कहा जाता है, क्योंकि यह मरणशील प्राणियों को जीवन प्रदान करता है। (तै. उ.1/6/4)।

इस विवेचन से स्पष्ट है कि जिसे हम परमसत्ता कहते हैं, उसीको अन्न या ब्रह्म कहते हैं। लोक में इसे जीवित रहने के साधन, लोक यात्रा हेतु आवश्यक साधन, भोजन, आहार, अन्न, अनाज, नाज या 'पत्रं, पुष्पं फलं तोयं' (गीता 9/26) कहते हैं।[1] इन्हीं जीवन रक्षक साधनों से शरीर राज्य में स्वराज्य अर्थात् विधि-व्यवस्था (राज्य, राजा, शासक) की स्थापना से मानसिक क्षोभ, भय, चंचलता आदि समाप्त होने से शांति स्थापित हो जाती है। इस अवस्था में मन सहित सम्पूर्ण प्राणी सर्वशक्तिमान की शरण में जाकर उसीमें 'रम' जाते हैं। शरीरस्थ प्रजा इस 'ईश्वरीय राजा' को प्राप्त कर निश्चिन्त हो जाती है। यही गीता (9/22) का "योगक्षेमं वहाम्यहम्" है - मैं ही प्राणियों के योग - अप्राप्त को देता हूँ और क्षेम, जो पहले से है उसकी रक्षा करता हूँ। इस स्थिति का विवेचन तैत्तिरीय उपनिषद (1/6/3-4) में किया गया है। रमण की इस स्थिति को कैवल्य कहा जाता है। इस स्थिति में सभी प्राणी परमतत्त्व की भक्ति में लीन रहते हैं और 'मन' की चंचलता, कष्ट, त्रास समाप्त होकर वह शांत हो जाता है। गीता (5/7) में इस स्थिति को "योगयुक्त जितेन्द्रिय" कहा है।

---

1. पुराण, महाभारत, उपनिषद, वेद आदि ग्रन्थों में बार-बार कहा गया है कि जिस ईश्वर, ईशु, खुदा, मुहम्मद आदि सत्ताओं को मनुष्य आकाश में (अपने से बाहर) ढूंढता है, वह अंधा है। जिस सत्ता (परमात्मा) से उसका निर्माण होता है वह तो उसके सामने है, वह अपने भीतर स्थित आत्मा के संकेत (शब्द) को सुनता है परन्तु फिर भी 'परमलोक' में स्थित 'ऋचा' को परमात्मा का स्वरूप मानने को तैयार नहीं होता है। इस प्रकार ऋग्वेद (1.164.39) के ऋषि का कहना है कि जिस 'ऋचा' को लोग पुस्तकों में पढ़ते हैं, वह प्रत्यक्ष रूप में 'परमव्योम' अर्थात् 'शरीर-ब्रह्माण्ड' के बाहर स्थित बाह्य ब्रह्माण्ड में अन्न, वृक्ष, पादप के रूप में उपलब्ध है। यह परम इसलिये है कि हमारे अन्तर में स्थित ऋचा अर्थात् जो रयि, गति, ऊर्जा, ओज आदि का स्रोत हैं। ये सभी हमारे बाहरी लोक से ही हमें प्राप्त होती हैं। ये ऋचाएँ अन्य कहीं से नहीं आती हैं, हम उन्हीं की शरण में जाते हैं, अतः यही परम तथा परम आत्मा भी हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसका अर्थ होता है, ईश्वर (परमात्मा) से योग होने पर ही इन्द्रियों को जीता जाता है। भारत की दुर्दशा का एक कारण यह भी रहा है, जहाँ हमें बताया जाता है कि साधनों के बिना ही इन्द्रियों का दमन करने वाले को 'इन्द्रियजित' कहा जाता है। यह मोक्ष (निवृत्ति) मार्ग की एक मानसिक वृत्ति (धारणा) है। इसे हमें प्रवृत्ति मार्ग पर भी लागू कर देने के उपदेश दिये जाते हैं। इसी को 'परधर्मो भयावह' (गीता 3/35) कहा गया है। अर्थात् निवृत्ति मार्ग के जीवों के धर्म को प्रवृत्ति मार्ग में अपना लेना ही समाज के लिये भयावह हो जाता है। क्या भूखे पेट भी कोई गोपाल (परमात्मा) में अपने मन को रमा सकता है? गोपाल इन्द्रियों को पोषण (पालन) देने वाले अन्न का नाम है।

4. पिण्ड ब्रह्माण्ड का स्वाराज्य (Autonomy) - स्वाराज्य की प्राप्ति के पूर्व जिस ब्रह्म स्वरूप में मनोमय पुरुष स्थित हो जाता है (तै. उ.1/6/2), उसका अर्थ होता है, शरीर के भीतर की अराजकता से भयभीत होकर प्रजा (इन्द्रियाँ, सूक्ष्म जीवाणु-दृष्य और अदृष्य दोनों) सामूहिक मन के द्वारा सबके लिये समान सुख और सुविधाओं की कामना करते हुए एक व्यवस्था (राजा, राज्य) की कामना करते हैं। इस कामना को ऋषियों ने इस प्रकार व्यक्त किया है-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्॥[1]

सभी सुखी हों, सभी निरोग रहें, सभी को शुभ दिखाई दे और किसी को भी दुःख का सामना न करना पड़े।

तैत्तिरीय उपनिषद् 1/6/3-4 को देखें, इसमें स्वाराज्य, राज्य, राजा अथवा मनस्पति की प्राप्ति हो जाने पर 'शरीर-राज्य' में अराजक

---

1. गरुड़ पुराण (2/35/52) में इस स्तुति को थोड़े से परिवर्तन के साथ कहा गया है - सर्वे मंगलम् भूयात् सर्वे सन्तु निरामयाः। शेष पूर्ववत है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

स्थिति में की गई 'सर्वे भवन्तुसुखिनः' की कामनायें पूर्ण हो जाती हैं। वेदों में जिसे स्वाराज्य या स्वराज्य कहा गया है, उसीको ग्रीक और यूरोपीय भाषाओं में ऑटोनॉमस (autonomous) कहा जाता है। लोक में इसे 'ऑठोनोमो उस, अर्थात् आठ नामों से युक्त शरीर या यांत्रिकी कहा जाता है। यही शरीर अष्टमचक्र (परमात्मा) के 'योग' से स्वयंचालित सत्ता (राज्य) बन जाता है। पुराणों तथा संतों ने इसे स्वात्माराम (अपनी आत्मा में ही रमण करना) कहा है। गीता में जिसे अष्टधा प्रकृति (आठ नामों के योग से निर्मित शरीर-राज्य) कहा है, वहीं इसे ग्रीक (यूनानी) भाषा में 'ऑटोनोमस' (स्वसंचालित या स्वयं में ही रमण करने वाला या आत्मनिर्भर) कहा गया है। विद्वान लोग, संत और महात्मा अपनी अन्तःप्रज्ञा से देखें तो उन्हें यह ज्ञात हो जायेगा कि जिसे भारत में 'अष्टांग योग' कहा गया है, वही ग्रीक में यह autonomous (आठ नामों से युक्त) है। पुराणों में इसी को अष्टाक्षरी मन्त्रों के नाम से जाना जाता है।

5. राजा (शासक) का शास्त्रीय स्वरूप - यहाँ पर ईश्वर, परमात्मा, अन्न ब्रह्म, राजा, राज्य आदि शब्दों से सामान्य लोगों को भ्रम हो जाता है कि परमात्मा कैसे राजा बन जाता है? अथवा अन्नब्रह्म राजा (शासक) किस प्रकार बन जाता है? ऐसी व्याख्याओं को जब लोग समझ नहीं सकते हैं, तो वे 'अध्यात्म' को जानने की इच्छा होते हुए भी निराश हो जाते हैं। यह इसलिये होता है कि हमें लोक में एक मनुष्य को राज सिंहासन में बैठे देखने की आदत पड़ गई होती है। हम इस लौकिक 'राजा' के अतिरिक्त किसी अन्य को 'राजा' के रूप में कैसे देख सकते हैं? यही कारण है कि हम आज तक शास्त्रों के रहस्य को खोल पाने में असमर्थ रहे हैं। परिणाम स्वरूप हमारा लौकिक राज्य अराजकता का ज्वलन्त रूप बन चुका है और इसकी दवा हम यूरोप और अमरीका में ढूंढते हैं।

निरूक्त और व्याकरण ग्रन्थों में स्पष्ट कहा गया है कि जो भी प्रजा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का रंजन करता है अर्थात् उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति कर उन्हें प्रसन्न रखता है, वही 'राजा' है ।[1] इस अर्थ में अन्न ब्रह्म हमारे शरीर में सभी प्रकार की जीवनी शक्ति देकर शरीर-राज्य के प्राणियों का रंजन करता है । इसी अर्थ में 'अन्न ब्रह्म' भी शरीर का 'राजा' कहा जाता है । जब यह राजा शरीर में स्थापित हो जाता है तो शरीरस्थ जीवों सहित सम्पूर्ण भीतरी शरीर को 'राज्य' कहते हैं । इसका दूसरा सूत्र है - 'एकोऽहम् बहुस्याम्' (मैं एक से ही अनेक हो जाता हूँ) । 'अन्नब्रह्म' एक है । जब इसमें से रस निकलता है, तो यही जल या दुग्ध हो जाता है, यही अन्न जब शरीर के भीतर रासायनिक ऊष्मा से जलने लगता है, तो यही अग्नि कहा जाता है । शरीर में जब जीवाणु (जीवसमूह) इसका भक्षण कर अपने और सम्पूर्ण शरीर का भी पोषण करते हैं, तो यही प्रजा रंजन कहा जाता है, अन्न प्राप्ति से शरीर के जीवाणु परस्पर द्वंद को छोड़कर इसी अन्नब्रह्म में स्थित हो जाते हैं, इससे अराजक या जंगलराज समाप्त होकर एक व्यवस्था उत्पन्न होकर शांति प्राप्त हो जाती है । तब इसी 'अन्न ब्रह्म' को राजा, शासक या परमसत्ता कहते हैं, आदि-आदि ।

6. लोक राज्य का अध्यात्म - अध्यात्म के साथ जो 'अधि' शब्द है, उसका अर्थ अधीनता और अनुशासन होता है । महर्षि पतंजलि ने अपने योग दर्शन में 'अनुशासन' को ही योग का प्रथम महत्त्वपूर्ण अंग माना है - अथ योगानुशासनम् (समाधि पाद :1)। लोक राज्य या शरीर-राज्य के सन्दर्भ में इसका अर्थ होता है, बिना अनुशासन के स्वराज्य या राज्य का

---

1. राजा राजते । दीप्यर्थक राजृ धातु से राजा बनता है (निरुक्त अ. 2 पाद 1) । दीप्ति का अर्थ ही होता है जो बल, ओज, बुद्धि को प्रदीप्त करे, यही 'रंजन' का भी अर्थ है । भरणाच्च प्रजानां वै मनुर्भरत उच्यते । प्रजा का भरण (रंजन) करने के कारण मनु (राजा) को भी भरत कहा जाता है- वायु पु. (पूर्वार्ध) 45/76 । 'आदावेव कुरुश्रेष्ठ राजा रंजन काम्यया'-राजा को सबसे पहले प्रजा के रंजन (आवश्यकताओं की पूति के साधन देने) की इच्छा करनी चाहिये । (महाभा.शा. प. 56/12) ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

निर्माण सम्भव नहीं होता है। अब इसकी विशद विवेचना कर हमें लोक राज्य में देखना होगा कि शासक राज्य के उद्देश्यों को अनुशासन के भीतर रहकर अपना कार्य कर रहा है या नहीं। राज्य का उद्देश्य 'सर्वे भवन्तु सुखिनः......; है। उसीके अनुरूप शासक या राजा सम्पूर्ण व्यवस्था बनाता है या नहीं। यदि शासक स्वयं अनुशासन के बाहर जाकर केवल लूटता है तो प्रजा का रंजन कैसे होगा? जब प्रजा भूखी रहेगी तो वह अनुशासन (मर्यादा) का पालन कैसे करेगी? अध्यात्मवादी इसे देखें और राज्य के क्रिया पक्ष की छोटी-से छोटी बात का विश्लेषण कर जन-जन तक राज्य के उत्पादों (रंजन के साधन) को पहुँचने में सक्रिय सहयोग दें, तो ऐसी स्थिति में शासकों की लूट प्रवृत्ति पर तत्काल प्रभाव पड़ेगा। आज तो गंगा उलटी बह रही है। छद्म अध्यात्म का चोला पहनकर लोग शासकों की लूट पर आँख बंदकर उनकी लूट में अपना भाग प्राप्त करने की आस लगाये बैठे हैं या स्वयं शासक का बरदहस्त प्राप्तकर अनेकानेक तरीकों द्वारा जनता के धन को लूट लेने में निमग्न हैं - प्रत्यक्षं किं प्रमाणं ? अध्यात्मवादियों को इस बात पर भी विचार करना चाहिये कि छद्म अध्यात्मवाद हावी होकर समाज और राज्य के मूल्यों को दीमक की तरह क्यों खाये जा रहा है? और अध्यात्मवाद के वास्तविक समर्थक क्यों विवशतापूर्वक देखते रह जा रहे हैं ?

इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्तमान में विरासत के रूप में जैसा अध्यात्म हमें मिला है, वह किसी मायाजाल से कम नहीं है। इस मायाजाल के अपने पक्ष हैं। आज इसके जो रूढ़ रूप हमें मिलते हैं, उनमें हम विज्ञान के शाश्वत सूत्र न देखकर गिरोहबंदी के सूत्र देखते हैं। परिणाम होता है, सभी गिरोह अपने-अपने प्रतीकों के अधीन एकत्र होकर दूसरे के प्रतीकों को हेय मानकर लड़ते हैं। दोनों का उद्देश्य होता है, एक दूसरे की संपत्ति प्राप्त कर लेना। यदि राज्य समभाव से संपत्ति (जीवन के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

साधन) को जन-जन तक पहुँचाने का कौशल सीख लेता है, तो अध्यात्म का यह प्रतीकवाद स्वार्थी गिरोहों का समूह न रहकर वैज्ञानिक ज्ञान के प्रतीक बन जायेंगे। इससे स्पष्ट हो जाता है कि सब कुछ राज़्य के 'कौशल' पर निर्भर करता है। इसीको महाभारत (शा. प. 69/79) में 'राजा कालस्य कारणम्' कहा गया है।

योगः कर्मसुकौशलम् (गीता 2/50)। लोग सोचते हैं, यह सूत्र केवल मनुष्य शरीर में लागू होता है, क्योंकि अध्यात्म से सम्बन्धित है। जैसे 'शरीर राज्य' के भीतर अनेक जीव रहते हैं वैसे ही लौकिक राज्य भी एक शरीर है, जिसके भीतर सभी मनुष्य रहते हैं। अतः लोक राज्य भी अध्यात्म का ही स्वरूप है। यदि शासन में 'कौशल' नहीं है, तो वह अराजक राज्य होता है। राज्य का कौशल बहुमुखी होता है।

7. राज्य-शरीर, पीपल और (People) लोक राज्य भी एक शरीर है, इसका स्पष्ट वर्णन भगवान श्रीकृष्ण ने गीता (10/26) में किया है- 'अश्वत्थः सर्व वृक्षाणां' - मैं वृक्षों में पीपल का वृक्ष हूँ। गीता (15/1) में कहा है - 'ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं' - मैं ऊपर की ओर जड़ों वाला और नीचे की ओर शाखाओं वाला पीपल का वृक्ष हूँ। कुछ लोग मैं के स्थान पर यह संसार वृक्ष अर्थ करते हैं, दोनों अर्थों में कोई अन्तर नहीं है। आगे (गी. 15/3) में - अश्वत्थमेनं सुविरूढ़ मूलम्-दृढ़ जड़ों वाले (संसार वृक्ष) पीपल वृक्ष का वर्णन भी है। कठोपनिषद (2/3/1) में भी कहा गया है - ऊर्ध्वमूलाऽवाक्शाख एषोऽश्वत्थः सनातन - ऊपर की ओर जड़ों और नीचे की ओर शाखाओं वाला यह पीपल वृक्ष सनातन (अर्थात् सदा से चला आ रहा) है। तात्पर्य है कि अश्वत्थ वृक्ष की तरह राज्य भी एक 'शरीर' ही है।

संस्कृत अश्वत्थ और पिप्पल को अनेक लोक भाषाओं और हिन्दी में 'पीपल' कहते हैं। हम लोग पीपल महात्म्य (महत्त्व एवं शाश्वत विज्ञान) को ऑक्सीजन उत्सर्जक स्त्रोत होने तक ही सीमित हो जाते हैं। इसके

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अतिरिक्त हमें अन्य कुछ भी दिखाई नहीं देता है। पीपल को संसार वृक्ष या चैतन्य सत्ता (ईश्वर) का स्वरूप कहने का तात्पर्य है कि जिस प्रकार पीपल वृक्ष में रसों (ऊर्जा) और उसके फलों में सूक्ष्म जीवाणुओं का वास होता है, ठीक उसी प्रकार सम्पूर्ण जीवित प्राणियों में सूक्ष्म जीवाणुओं का वास होता है। हमारे शरीरों में रक्त कण एवं अन्य जीवाणु (बैक्टेरिया) पीपल के फलों में रहने वाले जीव (जीवाणु) हैं। पुराण इसी कारण जीव और परमात्मा के स्वरूप का वर्णन सदा गूलर के फलों के रूप में करते हैं। पीपल, बड़, गूलर एक ही वर्ग के वृक्ष हैं।

अंजीर (तिमल) और बेड़ु भी पीपल वर्ग में आते हैं। श्रीमद्भागवत का 'वेणु गीत' इसी बेड़ु वृक्ष का सम्पूर्ण विज्ञान है, जिसमें कृष्ण प्रत्येक वेणु-फल में 'गोपियों' का रंजन करते हैं। इन फलों में स्थित रस ही फलों के भीतर स्थित भिन्न-भिन्न रसों की राशियाँ हैं। 'रसो वै विष्णुः' (रस विष्णु को कहते हैं) के अनुसार कृष्ण विष्णु के ही अवतार कहे गये हैं, अतः रंस की राशि ही कृष्ण हैं। उन्हीं रसों का आस्वादन गोपियाँ (जीव) करती हैं। यही 'रास लीला' है। लीला ही माया है। यह एक निश्चित समय तक चलती है फिर फल झड़ जाते हैं। पुस्तकों में 'वेणु' का अर्थ बंशी या बांसुरी किया जाता है। शास्त्रीय अर्थ में 'बंशी' का अर्थ दो वंशों जीव, आत्मा (स्त्री) और परमात्मा (पुरुष) के सम्मिलन से उत्पन्न नृत्य तरंगों के नाम हैं, जो जीव को अपने प्रिय की ओर आकर्षित करती हैं। शास्त्रों का ज्ञान-विज्ञान कितना जटिल है, उसका यह एक उदाहरण है।

इस पर भी गीता और श्रीमद्भागवत् के आधुनिक मर्मज्ञ अपने गहन ज्ञान का जैसा ढोल पीटते हैं, इसे सम्पूर्ण विश्व जानता है। यह एक आश्चर्य है कि हम अंग्रेजी के people (पीपल) को न तो देख पाते हैं, न पहचान पाते हैं। उसी प्रकार यूरोप और समस्त विश्व के प्रकाण्ड विद्वान पीपल के वृक्ष के रहस्य और people (पीपल-जनता) को नहीं देख पाते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हम श्रद्धा से पीपल के वृक्ष को पूजते हैं, परन्तु जब एक भूखा मानव समुदाय (people) कुछ माँगता है, तो दुत्कार देते हैं, परस्पर लड़ते हैं। यह कैसा धर्म है? पीपल्स डेमोक्रेसी (जनतंत्र) क्या यही है? हमारे और विश्व के मीनषियों, अध्यात्मवादियों, योगियों और केवल चुनाव काल में पीपल (people) की पूजा करने के आडम्बरी शासकों को इस समस्या को गंभीरता पूर्वक लेना होगा। शासक कब तक धोखों की अपनी दुकान चलाते रहेंगे?

इस विवेचन का निष्कर्ष यह है कि जिस प्रकार मानव शरीर एक राज्य का रूप बनकर शरीर के भीतर स्थित जीवों (people या पीपल वृक्ष) का, रंजन या पूजा करता है, ठीक उसी प्रकार लौकिक राज्य - शरीर को भी अपने भीतर स्थित मनुष्यों का रंजन और सेवा करनी चाहिये। तात्पर्य है कि लोक राज्य, शरीर राज्य का ही विस्तार है। इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि पर्यावरण मनुष्य और राज्य एक दूसरे पर निर्भर हैं।

इस राज्य में व्यक्ति पीपल या गूलर के फलों में रहने वाले जीवों (जीवाणुओं) का प्रतिनिधित्व करते हैं। "अब प्रश्न उठता है कि इस 'राज्य शरीर' में किस प्रकार 'पीपल तंत्र' (स्वराज) लाया जा सकता है। संक्षेप में इसका उत्तर है कि शास्त्रों ने जिस 'अष्टांग योग' का वर्णन किया है, उसीको थोड़े से परिवर्तनों के साथ राज्य शरीर में भी लागू किये जाने से ही लोक तंत्र (पीपल राज या people's cracy या स्वराज) लाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं है। शरीर-राज्य की तरह लोक राज्य भी यम-नियमों की आधार शिला पर ही खड़ा होता है।

प्रत्येक प्राणी, प्रत्येक मनुष्य लोक राज्य में भी उसी प्रकार की शांति और आनंद चाहता है जैसा परमानंद मनुष्य को शरीर राज्य में परमात्मा की प्राप्ति (सानिध्य) से मिलता है, वह (मन) अपने सम्पूर्ण कष्टों को भूलकर उसी एक में लीन हो जाता है। इसी 'अधि' अर्थात् अपनी ही

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आत्मा की अधीनता स्वीकार कर लेने से उत्पन्न परम आनंद को अध्यात्म कहते हैं । इस अवस्था में मनुष्य (मन) स्वयं के पृथक् अस्तित्व (द्वैत) से ऊपर उठकर अद्वैत (एक परमसत्ता) में स्वयं को लीन कर लेता है । वह उसी एक सत्ता का अंग बन जाता है तथा मन का द्वैत भाव समाप्त हो जाता है । यही 'अध्यात्म' का रहस्यमय स्वरूप है जिसे प्रत्येक मनुष्य प्राप्त करने के लिये छटपटाता रहता है, परन्तु 'अध्यात्म' है कि वह हमसे दूर होता जा रहा है ।

8. लोकयात्रा का अध्यात्म - आज की स्थिति ठींक उलटी है । हमारे मन को कभी भी विश्राम नहीं मिलता है । आज का व्यक्ति हर समय धन, संपत्ति की लिप्सा में लिपटा रहता है । कितनी संपत्ति बढ़े, अल्प समय में वह किस प्रकार धनाढ्य बने, इसीमें प्रत्येक का मन अशांत बना रहता है। तात्पर्य यह है कि हमने अपनी बाहरी अर्थ व्यवस्था अर्थात् मनुष्यों के रंजन-साधनों की प्राप्ति की ऐसी व्यवस्था विकसित कर ली है, उसके साथ ऐसी नीति और सिद्धान्त जोड़ लिये हैं, जो हमारे बाह्य 'मन' को कभी भी शांत नहीं रहने देते हैं ।

अध्यात्म में अर्थ व्यवस्था को 'लोक यात्रा' के साधन कहा जाता है। जब हमारी 'लोक यात्रा' के साधन ही बेचैनी और आपा-धापी से भरे होंगे तो हमारा 'मन' शांत कैसे रह सकता है? जब हमारा 'मन' शांत न रहेगा तो हमें अध्यात्म का सुख कैसे प्राप्त हो सकता है? इसका सीधा सा विज्ञान है, जब शरीर के भीतर स्थित परमात्मा से प्राप्त सारी ऊर्जा और उसका पोषक तत्त्व बाहरी मन द्वारा ही खींच लिया जायेगा तो हमारा अन्तर्मन कैसे शांतिपूर्वक 'भजन' में लीन हो सकता है? दूसरे शब्दों में हमें आज की अर्थ व्यवस्था से अध्यात्म की प्राप्ति नहीं होती है । हम इधर-उधर भटकते हैं, अध्यात्म-अध्यात्म, शांति-शांति चिल्लाते हैं, गुरुओं की शरण में जाते हैं, परन्तु शून्य का शून्य ही प्राप्त होता है । आज के गुरुओं की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बेचैनी देखने की दृष्टि विकसित करें, वे स्वयं ही वर्तमान आपा-धापी वाली अर्थ व्यवस्था से जुड़कर उसीके अंग बन चुके हैं। जब वे स्वयं बेचैन हैं, स्वयं को शीर्ष स्तर का गुरु सिद्ध करने में लीन हैं, तो वे कैसे दूसरे को शांति दे सकते हैं? इन प्रश्नों में ही उत्तर समाये हुए हैं, इनकी अलग से व्याख्या करने की आवश्यकता नहीं है। इसे प्रत्यक्ष में देख लिया जाना चाहिये। आश्चर्य तो इस बात का है कि विश्व के तथाकथित अध्यात्मवादी, संत, शांतिदूत, योगदूत सभी शांति की औषधियाँ (टोटके) देने का खेल खेलते हैं, परन्तु बेचैनी, अव्यवस्था और अनाचार किस कदर अध्यात्म पर हावी है, इसकी ओर से ये स्वयंभू महान आत्माएँ आँखें बंद किये हैं। रोग की जड़ कहाँ है, इसको जाने बिना अध्यात्मिक बाबा झाड़-फूंक प्रारंभ कर सबको चमत्कृत कर देते हैं। सम्पूर्ण को लिये बिना केवल एक अंग से शांति, सहजता, सरलता, चिंतामुक्ति लाने का दावा कर हम सबको ठग तो सकते हैं, परन्तु धरती पर इसे उतार नहीं सकते हैं। यह इसलिये कि हम अपने स्थूल शरीर और बाहरी मन को शांति देने और उन्हें स्वस्थ रखने के भौतिक उपायों (बाह्य साधनों) को ही अध्यात्म की औषधि मान लिये हैं। हमने अपने भीतर के 'ब्रह्माण्ड जगत' को देखने की आवश्यकता नहीं समझी है। यह इसलिये नहीं समझी कि हम परंपरागत रूप में इस विधा को भूल चुके हैं। आज हमारा सारा ज्ञान कुछ लोगों के अध्यात्मिक न्यास (ढोंग) को बाजार में बेच देने तक सीमित हो गया है, जबकि शास्त्र चिल्ला-चिल्लाकर कहते हैं कि गृहस्थ जीवन से बढ़कर अन्य कोई जीवन नहीं है। गृहस्थ आश्रम ही अन्य सभी आश्रमों का आधार है। इस आश्रम के बिना अन्य आश्रम टिक नहीं सकते हैं (महाभा. शा.प. 191/10; मनुस्मृति 6/87-90)। तात्पर्य है कि जिन्हें गृहस्थाश्रम के अध्यात्मिक स्वरूप का ज्ञान नहीं है, वे ही आज गृहस्थाश्रमियों के गुरु बनकर उनकी मति को भ्रष्ट कर रहे हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

9. अध्यात्म का आकर्षण - अध्यात्म की इच्छा मानव मात्र में जन्मजात होती है । हम लोग यह नहीं जानते हैं कि आज के लोगों की बेचैनी का कारण हमारी आर्थिक व्यवस्था और उसके साथ जुड़ी दिनचर्या में ओत-प्रोत है । जब सही निदान नहीं होता है तो व्यक्ति उद्विग्न हो जाता है। आज का अमरीका और यूरोप इसी उद्विग्नता के कारण शांति से सो नहीं पाता है, उसे नींद की गोलियाँ और शराब का सहारा लेना पड़ता है । सन् 1893 से 1900 तक स्वामी विवेकानन्द ने जब अमरीका और यूरोप का भ्रमण किया था, तो उन्होंने पश्चिम के इस मानसिक विक्षोभ का विस्तार से वर्णन किया है, तब से अब तक लगभग 125 वर्ष बीत चुके हैं । अब तो स्थिति और भंयकर हो चुकी है । अब तो नींद की गोलियों और शराब के अतिरिक्त अनेक प्रकार की नशीली दवाओं (ब्राउन शूगर, स्मैक, हेरोइन आदि) का प्रयोग विश्व के सभी क्षेत्रों में हो रहा है, कहीं कम और कहीं अधिक, अन्तर इतना ही है ।

आज विकसित यूरोप और अमरीकी विज्ञानविदों और उनके समर्थकों ने मनुष्य के मानसिक त्रास को बढ़ाने के साथ-साथ नशे की दवाओं और शराब से विश्व को ढक दिया है । इस स्थिति का एक मात्र कारण आधुनिक हाई-टेक सभ्यता है, जिसके साथ मनुष्य सहजता का अनुभव नहीं कर सकता है । जब वह टेक्नोलॉजी के वेग के साथ स्वयं का समन्वय नहीं कर सकता है तो अपनी मानसिक उद्विग्नता से उत्पन्न त्रास को वह अनेक प्रकार के नशों से भुला देने का प्रयास करता है । यह क्रिया भी मन की शांति लाने के लिये प्रयोग में लायी जाती है, परन्तु इसका प्रभाव उलटा पड़ता है, इससे मन के साथ अनेकों शारीरिक व्याधियाँ भी उत्पन्न हो जाती हैं । तब इन व्याधियों के निवारण के लिये दवा, प्राकृतिक चिकित्सा, योग आदि की नयी-नयी दुकानें खुल जाती हैं । इनसे थोड़ी देर के लिये व्यक्ति अपने कष्टों को भूल जाता है, परन्तु जब उसकी जीविका

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का साधन यही हाईटेक और उसके दाँव-पेंच उससे चिपके रहते हैं तो उसे कैसे सहज शांति प्राप्त हो सकती है? इस सहज शांति का नाम अध्यात्म है। जिस काल में मन की 'चंचलता' (मानसिक द्वन्द) मिट जाता है, वही काल 'अद्वैतकाल' है - वही शांतिकाल है ।

वर्तमान 'हाईटेक' सभ्यता के नियन्त्रण पर ध्यान न देकर अगल-बगल के झाड़-झंखाड़ों से मूल समस्या को ढक कर समस्या का हल मान लेना निश्चय ही टेक्नोलॉजी पर टेक्नोलॉजी लादने के समान है । इससे एक ऐसी अराजकता उत्पन्न हो जाती है जिसे -'आतंक' कहा जाता है । इस आतंक की ज्वाला का वर्णन हजारों वर्ष पूर्व गीता में इस प्रकार किया गया है -

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतङ्गा विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः ।
तथैव नाशाय विशन्ति लोकास्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगाः ।।11:29।।

जैसे पतंगे दौड़-दौड़कर वेग से प्रदीप्त अग्नि में प्रवेश करते हैं, वैसे ही ये सब प्राणी नष्ट होने के लिये अत्यन्त वेग के साथ आपके मुख में प्रवेश कर रहे हैं ।

हाईटेक के कारण शांति की प्राप्ति न हो पाने के कारण बेचैन मन उसी टेक्नोलॉजी को प्रतिरोध का अस्त्र बना लेता है, इसी को आतंक की ज्वाला कहते हैं । टेक्नोलॉजी का वेग ही महाकाल का मुख है । उसी में सभी पक्ष-विपक्ष पतंगों की तरह दौड़ते हुए प्रवेश कर नष्ट हो जाते हैं । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि हाईटेक के अनियंत्रित प्रयोग को सीमित करें । इसके बिना शांति लाने के अन्य सभी उपाय निष्प्रभावी हो जाते हैं । महाभारत प्रमाण है, वहाँ महान योगी चिकित्सक; विद्वान, साधु-संत सभी थे, परन्तु 'हाईटेक' की माया के समक्ष किसी की नहीं चली । यही शास्त्रीय हाईटेक से प्राप्त निष्कर्ष है जिसे लोक शिक्षा के रूप में बताया जाता है । यह भी अध्यात्म ज्ञान का एक अंग है (देखें, महाभा. शा.प.

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

194/1-4 एवं अध्याय-301) ।

10. गलत दिशा में अध्यात्म की खोज – उपर्युक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि आज का मानव विज्ञान के चमत्कार में इतना निमग्न हो चुका है कि वह परमात्मा या ईश्वर की सत्ता को देख नहीं पा रहा है । परमसत्ता के साथ आज के मनुष्य का कोई लगाव नहीं रह गया है, फिर भी वह अध्यात्म को ढूंढ रहा है । शांति प्राप्त कर मन की उद्विग्नता का शमन करना ही अध्यात्म है । हमें शांति कहाँ से प्राप्त होगी? जबकि आज के मनुष्य का 'ईश्वर' में न तो विश्वास है न लगाव, वह अन्न को श्रम का उत्पाद भर मानता है । भूख को वह ईश्वर की प्राप्ति का साधन नहीं वरन् एक प्राकृतिक आवश्यकता भर मान्नता है । आज की 'फास्टफूड' संस्कृति ने तो मनुष्य की श्रद्धा और भक्ति भावना को ही नष्ट कर दिया है । इसके लिये मानव के भीतर स्थित आसुरी (दैत्य) मन के एक छत्र नियंत्रण की प्रवृत्ति और देवों की अति उपभोग की विलासिता प्रवृत्ति, दोनों ही उत्तरदायी हैं । पुराणों में इसका विस्तार से वर्णन है । दैत्य सदा निरंकुश सत्ता प्राप्ति हेतु भगवान शिव की आराधना करते हैं, वहीं देवता दैत्यों को पराजित कर स्वर्ग की विलासिता प्राप्ति हेतु विष्णु और शिव की उपासना करते हैं । अनेक पुराणों में ब्रह्मा देवताओं की पराजय के कारण उनकी विलासिता पूर्ण जीवन को बताते हैं । ये कहानियाँ भर नहीं हैं, यह हमारे शरीर-ब्रह्माण्ड का सत्य है । इस पुस्तक में कुछ कथाओं का वैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है, वैज्ञानिक इसे जांच सकते हैं ।

आज की वैज्ञानिक बुद्धि, गीता (4/11) के सत्य को समझने और उस पर गंभीरतापूर्वक विचार किये जाने को समय नष्ट करने जैसा समझती है । इसी मानसिकता से गीता के मर्मज्ञ भी पीड़ित हैं, वे भी गीता का मर्म समझे बिना लोक भाषा के अनुरूप अर्थ कर देते हैं । गीता के भाव पक्ष या मन संबंधित यह कथन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, एक टेक्नोक्रेट का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

ध्यान इस पर जाना चाहिये। गीता (4/11) के अनुसार - ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांतथैव भजाम्यहम् - जो प्राणी जिस भाव (प्रयोजन) से मुझे भजता है अर्थात् मेरा जैसा उपयोग चाहता है, मैं उसको उसी के अनुरूप प्रतिफल देता हूँ अर्थात् मैं अपने स्वरूप को वैसा ही बना लेता हूँ।

इस कथन को कुछ लोग अनर्गल प्रलाप कह सकते हैं, क्योंकि वे ईश्वर के स्वरूप को जानते ही नहीं हैं। फ्रांस के आधुनिक अस्तित्वादी (Existentialist) विचारक सार्त्र ने इस विचार का समर्थन किया है। लोग यह नहीं जानते हैं कि इसीको हमारे वेदादि सम्पूर्ण शास्त्र आस्तिक (वाद) कहते आये हैं। यह समय का फेर है कि हमने ही "आस्तिक" शब्द को "पोंगा-पन्थ" का अर्थ दे दिया, क्योंकि हम इसके वैज्ञानिक स्वरूप को स्पष्ट कर पाने में सफल न हो सके। अब स्थिति बदल गई है। इस कथन (गीता 4/11) के द्वारा भगवान श्रीकृष्ण कह रहे हैं कि 'अन्न ब्रह्म' के रूप में जो प्राणी मेरा चिंतन बल प्राप्ति के लिये करता है, तो मैं उसका बल बन जाता हूँ। जो बुद्धि चाहता है, मैं ही उसकी बुद्धि बन जाता हूँ। जो देखना चाहता है, मैं उसकी दृष्टि बन जाता हूँ। जो स्वाद का आनन्द चाहता है, मैं उसके लिये 'रस' बन जाता हूँ। जो कानों से मुझे देखना चाहता है, उसके लिये मैं संगीत, कविता और शब्द बन जाता हूँ आदि आदि। यही स्थिति लोक में भी होती है। यदि मनुष्य वैज्ञानिक कौशल का प्रयोग मानवता की वृद्धि के लिये करना चाहता है, तो वह मानवीय क्षमता की सापेक्षता के अनुरूप यांत्रिकी का निर्माण करता है, यदि वह दूसरों पर अत्याचार और अपनी अधीनता में लेने के भाव से यांत्रिकी बनाता है, तो वही लोहा बंदूक, बम, एटमबम, टैंक आदि बन जाता है। इस प्रकार गीता बता देती है कि मन ही सृष्टि की उत्पत्ति का कारण है। अतः लोक में भी मनुष्य की आकांक्षायें लोक हित को ध्यान में रखकर होनी चाहिये।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

11. मानवीय गरिमा का पतन - वैज्ञानिक यांत्रिकी पर अधिक आश्रित होने के भावों ने आज के मानव में पारस्परिक लगाव का भाव कम हो गया है या समाप्त प्रायः हो चुका है। लगाव को ही श्रद्धा भी कहते हैं, यही 'सहभाव' भी है। ईश्वर रचित यांत्रिकी अर्थात् शरीर-यन्त्र द्वारा जो श्रम किया जाता है, उसका अपना महत्त्व होता है। प्रत्येक मनुष्य को श्रम से उत्पन्न कष्ट का अनुभव होता है। उसी श्रम के कष्ट को वह दूसरे मनुष्यों के श्रम में भी देख लेता है। ऐसी स्थिति में प्रत्येक मनुष्य दूसरे मनुष्य के श्रम के महत्त्व और उसके कष्ट को समझ लेता है। इससे प्रत्येक मानव का दूसरे से 'लगाव' हो जाता है। यही लगाव समाज और राज्य में 'समत्वयोग' लाता है। आज ईश्वरीय टेक्नोलॉजी (मानव शरीर या यांत्रिकी) को मानव निर्मित टेक्नोलॉजी ने हेय बना दिया है। आज वैसी ही स्थिति उत्पन्न हो गई है जैसा कि अर्थशास्त्र में कहा जाता है कि 'सोने के सिक्कों को नकली सिक्के चलन से बाहर कर देते हैं।'

आज मनुष्य भी असली सोने के सिक्कों की तरह चलन से बाहर होता जा रहा है। मनुष्य का महत्त्व इतना गिर गया है कि सम्पूर्ण विश्व में सत्ता ने ईश्वरीय यांत्रिकी के स्थान पर मानव निर्मित द्वितीय स्तर की (नकली, माया की तरह मोह लेने वाली) यांत्रिकी का उपयोग कर मानव को मानव का दास बनाकर उसकी गरिमा को इतना गिरा दिया कि इस मायामयी मानव निर्मित यांत्रिकी के समक्ष वह कीड़े-मकोड़ों की तरह अवांछनीय हो गया हैं। द्वितीय स्तर की यांत्रिकी हमें प्रिय हो गई और ईश्वरीय यांत्रिकी (मानव) को दुत्कारने में ही आज की हाईटेक सभ्यता का विकास गौरव समा गया है। परिणाम में सम्पूर्ण विश्व अशांति, अव्यवस्था, लूट, चोरी, डकैती, अमानवीयता, दुष्कर्म, आतंकवाद और क्रूरतापूर्ण हत्याओं आदि के चक्रव्यूह में फँस गया है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आतंकवादी क्रूरताएँ, सत्ताधारी वर्ग द्वारा निर्बल वर्ग के शाश्वत अधिकारों को द्वितीय स्तर की मायावी यांत्रिकी द्वारा छीन लिये जाने की प्रतिक्रिया हैं। ये प्रतिक्रियाएँ वर्षों से दबाई गईं, मानव के स्वाभाविक 'योग क्षेम' के अधिकार की भी उपेक्षा का प्रतिफल है। भारत में दुष्कर्म और उनसे जुड़ी क्रूर हत्याएँ इसी द्वितीय स्तर की मानव यांत्रिकी के दुरुपयोग का विकार हैं। भारत में भी इस नकली यांत्रिकी ने अर्थ एवं समाज व्यवस्था के ईश्वरीय स्वरूप को सत्ताधारियों के हाथों में एकत्र कर मनुष्यों के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर दिया है। इसके परिणाम-स्वरूप व्यक्ति उद्देश्य विहीन होकर एक 'प्रेत' की तरह व्यवहार करने लग गया है। लोक में कहा जाता है - 'खाली मन शैतान का घर'।

12. खाली मन शैतान का घर - आज भारत और विश्व के अस्सी से नब्बे प्रतिशत लोग 'खाली' हैं। खाली का अर्थ उनके पास स्वाभाविक श्रम का अकाल है, उनमें सभी कार्य मशीनें कर देती हैं, तो उन्हें ईश्वर प्रदत्त श्रम के महत्त्व का ज्ञान होता ही नहीं है। परिणाम स्वरूप वे एक दूसरे के प्रति षड़यन्त्र रचते रहते हैं। भारत में तो स्थिति यह है कि व्यक्ति 50 वर्षों तक भी 'खाली' ही रहता है अथवा मृत्युपर्यन्त खाली रहता है, तो उसके और उसकी पीढ़ी के खाली मस्तिष्क में 'शैतान' के अतिरिक्त कौन बैठ सकता है? देवताओं (व्यवस्था और उसके साधन) पर तो कुछ ही लोगों का नियंत्रण है। यही बात पौराणिक राक्षस और असुर भी कहते हैं कि हमने देवताओं को भी बंदी बना लिया है। ठीक वहीं स्थिति वर्तमान में है। कुछ लोगों ने सम्पूर्ण आर्थिक, राजनीतिक और वैज्ञानिक व्यवस्था को बंधक बना रखा है। इन पूंजीपतियों, औद्योगिक घरानों ने ईश्वरीय यांत्रिकी (मनुष्य) के स्थान पर मानव निर्मित द्वितीय स्तर की यांत्रिकी (टेक्नोलॉजी) को अपना प्रभु बना लिया है। जिसने अपनी अंगुलियों से मनुष्यों की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जीविका छीनकर उन्हें मरने के लिये छोड़ दिया है । इन मनुष्यों की क्रियाशक्ति (अंगुलियों एवं साधनों) को अपने गले में सजा-सजाकर हार की तरह पहन रखा है ।[1]

दैत्य सभ्यता के अति यांत्रिकीकरण (हाईटेक) ने ईश्वरीय यांत्रिकी (मानव स्वरूप) को बंधक बना लिया है, तो हमें 'अध्यात्म' अर्थात् ईश्वर प्रदत्त साधनों की प्राप्ति या ईश्वर का सानिध्य कहाँ से मिल सकता है? तात्पर्य यह है कि 'अध्यात्म' का जो रूप है उसे हम पहचानते नहीं हैं, केवल अध्यात्म के नाम पर 'टोटकों' का प्रचार कर रहे हैं । 'अध्यात्म' तो 'परम व्योम' में उत्पन्न उन ऋचाओं में हैं, जिन्हें हम 'अक्षर' (शब्द या नाम) से पहचानते हैं - ऋचा अक्षरे परमे व्योमन (ऋ.1/164/39) । इन्हीं ऋचाओं को दैत्यों ने अपने अधिकार में कर लिया है ।

पुराणों में कहा गया है कि असुरों की अधीनता से मुक्ति के लिये देवताओं को एक हजार वर्ष तक युद्ध करना पड़ा था । इसे 'देवासुर संग्राम' कहा जाता है । यह केवल कथा नहीं है ।आज भी शरीर ब्रह्माण्ड में यह युद्ध होता है । इस युद्ध में दैत्यों का पराभव होता है और नयी सृष्टि की रचना प्रारंभ हो जाती है । पुराणों में इस स्थिति को लुप्त वैदिक ज्ञान की प्राप्ति कहा गया है । जब यह ज्ञान प्राप्त हो जाता है तो लोक में यज्ञ प्रारंभ हो जाते हैं । इन्हीं यज्ञों से देवताओं को भी तृप्ति मिलती है। देवता वे प्रवृत्तियाँ हैं, जो शरीर ब्रह्माण्ड में स्थित जीवों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विराट् मानव शरीर (स्थूल) को कर्म (यज्ञ) करने को प्रवृत्त करती हैं । अब प्रत्येक प्राणी या मनुष्य अपने भीतर स्थित जगत् का पालन-पोषण करने के लिये किस प्रकार के यज्ञ (कर्म) करता है अर्थात् साधनों को

---

1. बौद्ध कथाओं में डाकू अंगुलिमाल की कथा है । आज का यंत्रीकरण अंगुलियों (रिमोट बटन) पर आधारित होने से उसने वैश्विक अंगुलिमाल का रूप ले लिया है। देखें: भारत के लोगों का संविधान और दर्पण, ले0 हरिदत्त शर्मा, पृ. 18-22 ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जुटाता है, इसे लोक व्यवहार में देख लिया जाता है, जो लोग इसे नहीं जानते हैं वह भ्रमित हो जाते हैं। वे यज्ञ को अग्नि में होम करने की प्रक्रिया तक सीमित हो जाते हैं। इस होम वाले यज्ञ से कैसे प्राणियों की तृप्ति होती है, यही आलोचना याज्ञिकों को निरूत्तर कर देती है। जबकि शास्त्र कहते हैं, यह लोक में की जा रही यज्ञ क्रिया,शरीर ब्रह्माण्ड में लगातार हो रहे यज्ञ (क्रियाओं, कर्मों) का प्रतीक है। इसीको वैज्ञानिक सूत्र भी कह सकते हैं, जिन्हें पकड़कर विराट् शरीर-ब्रह्माण्ड के सम्पूर्ण रहस्यों का ज्ञान विद्वानों को हो जाता है।

आज के युग में यज्ञ करने के साधन दैत्यों के कौशल में सिमट गये हैं। खाली मनुष्य अपने भीतर के जगत् की आवश्यकताओं की पूर्ति किस प्रकार करे, उसके समक्ष यह समस्या उठ खड़ी होती है। जब मनुष्य वृत्ति विहीन होता है तो यम-नियम, आचार-विचार, धारणा, समाधि कुछ भी काम नहीं करते हैं। इस स्थिति में (वृत्ति विहीनता या बेरोजगारी) में कोई व्यक्ति कर्म (यज्ञ) भी कैसे कर सकता है? जबकि उसका आन्तरिक जगत् धर्म, अर्थ और काम के साधनों की मांग करता है। साधन न होने से कर्म (श्रम, यज्ञ) नहीं होते हैं, कर्म नहीं होते तो मस्तिष्क (मन) खाली (बिना आधार के) रहता है। इस खाली 'मन' में शैतान आ जाता है और राज्य में भ्रष्टाचार, लूट, बलात्कार, हत्या, झूठ, धोखाधड़ी की प्रचण्ड आँधी ले आता हैं। निष्कर्ष निकलता है कि राज्य व्यक्ति को रोजगार दे, उसे खाली 'मन' न रखे।

हम सभी जानते हैं, यह स्थिति वर्तमान 'अर्थ-व्यवस्था' के जड़ स्वभाव को अति महत्त्व दिये जाने से उत्पन्न हुई है, फिर भी हमारी बुद्धिमता को देखें, बड़े-बड़े कारखानों में, बड़े-बड़े शहरों में, युद्ध सामग्री में, आणविक रिएक्टरों में इलेक्ट्रॉनिक एवं प्रिंट मीडिया के प्रचार में और धूर्त राजनीतिक गिरोहों (दल नहीं) में हम 'अध्यात्म' को ढूंढ रहे हैं। अथर्वेद में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसीको जादू और इन्द्रजाल कहा गया है । किसी एक कालखण्ड में शरीर की आन्तरिक यांत्रिकी (कलियुग) में यही सब होता है । लोक में यही अराजकता बन जाती है । साधन संपन्न मदारी प्रचार साधनों से जहाँ, एक ओर चुनाव काल में स्वर्ग लाने का वादा करते हैं, बड़े-बड़े उद्योग अपने उत्पाद को सब रोगों की दवा बताते हुए मजमा लगाये रहते हैं, वहीं दूसरी ओर इनके माफिया, जिन्हें ये प्रतिनिधि कहते हैं, लूट, डकैती, हत्या, ट्रेन-डकैती, ट्रेन टिकटों की ब्लैकमेलिंग, दुष्कर्म आदि में लीन रहते हुए सम्पूर्ण संसार की व्यवस्थाओं को नष्ट करने में लगे हुए हैं, इसीको ये लोग विज्ञान का वरदान कहते हैं । ये अन्धे हैं, ये देखते ही नहीं कि किसी मंत्री, पुलिस अधिकारी, माननीय प्रशासक और उनके गुर्गे और पुत्र, राह चलते लोगों की कट्टों से हत्या कर रहे हैं, राड से पीट रहे हैं । महिलाओं के गले की चेन छीन ले जा रहे हैं, छोटी-छोटी कन्याओं को उठाकर इनके साथ दुष्कर्म कर उनकी हत्या कर सर्वत्र घूमते हैं, जबकि हमारा मीडिया हमारे माननीयों को उत्तरदायी होने से बचाने के लिये पाकिस्तानी और अरब देशों में हो रही क्रूर हत्याओं को दिखाकर आन्तरिक संवेदनाओं के विस्फोट को कम करने के लिये यह कहता हुआ दिखता है कि हमें अपने शासकों को धन्यवाद देना चाहिये कि इन्होंने इन देशों की अमानवीय क्रूरताओं से हमें बचा रखा है । यही 'कलियुग' कहा गया है, जहाँ हाई-टेक्नोलॉजी अपने पूर्ण स्वरूप में क्रियाशील हो जाती है । सभी इसी की गति के अधीन भागम-भाग के चक्रव्यूह में फँस जाते हैं । मानवीय मूल्यों, आदर्शों और उद्देश्यों का लोप हो जाता है । राजनीतिक नेतृत्व सच को झूठ और झूठ को सच सिद्ध करने में ही स्वयं की राजनीतिक कुशलता की सिद्धि मानता है (लंका काण्ड में रावण के अहंकार को देखें) । मीडिया (देश और विदेश की) जिसे रावण की जिह्वा कहा जाता है, उसी के गुणगान में मगन रहती है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

पुराणों में साधन रहित, श्रम रहित, वृत्ति विहीन मन को प्रेतात्मा कहा गया है। भारत व विश्व में ये प्रेतात्माएं क्या कर रही हैं, इसे कौन नहीं जानता है? दैत्य सत्ताएं प्रेतात्माओं का उपयोग आतंक के लिए करती हैं।

13. टेक्नोलॉजी का मायाजाल - जब तक हम इस जादू, मायाजाल और इन्द्रजाल को समझ पाते हैं, तभी विनाश (जल प्रलय) का महाकाल धरती पर अवतरित हो चुका होता है और कोई कुछ भी करने की स्थिति में नहीं होता है । एक नयी व्यवस्था अर्थात् शासन तंत्र आता है । पुराणों में इस नवीन शासन के प्रमुख को राजा अर्थात् प्रजा का, लोक का रंजन करने वाला कहा जाता है । शरीर-राज्य में इस राजा को ही इन्द्र कहा जाता है । शरीर-राज्य में नवीन राज्य के आने से पूर्व 'यम और नियमों' का पालन आवश्यक होता है जिससे 'सर्वे भवन्तु सुखिनः.....' की प्रबल भावना विकसित होती है, इस काल में शरीर-राज्य के सभी लोग पूर्व में लूटी गई संपत्ति को राज्य को लौटा देते हैं, यहीं से समानता का भाव विकसित होता है। इससे यम-नियम के अहिंसा और अपरिग्रह भाव में दृढ़ता उत्पन्न हो जाती है । लोक राज्यों में इसके विपरीत होता है, यहाँ नयी सरकार आने के बाद भी पूर्व में लूटे गये धन को न तो कोई राज्य को लौटाता है, न नयी सरकार ही उस लूट के धन को लोक हित के लिये लेती है । इससे यम और नियमों की स्थापना होती ही नहीं है और नये सिरे से लूट और भ्रष्टाचार दुगुने स्तर पर चलता रहता है, क्योंकि नयी सरकार लूट और भ्रष्टाचार को अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानती है । विश्वभर के वर्तमान राज्यों की अराजकता का एकमात्र कारण यही है कि सरकारें यम और नियमों के आधारभूत सिद्धान्तों का पालन करती ही नहीं हैं, वे इन्हें नैतिक व्यक्तिगत नियम बनाकर स्वयं के उत्तरदायित्व से मुक्ति पा लेती हैं । वर्तमान राज्यों के प्रबुद्ध लोगों को यह बुद्धि तभी आयेगी जब उन्हें इस बात का अहसास होगा कि राज्य की प्रणाली भी उसी तरह लौकिक अराजकता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के शमन के लिये स्थापित होती है, जैसे शरीर-राज्य में 'राजयोग' या मनु का अविर्भाव होता है।

आज सम्पूर्ण विश्व अराजकता के उस काल में पहुँच चुका है जिसे कोई देख नहीं पाता है। 'कलियुग' की कालिमा (वैज्ञानिक कौशल एवं उसका विनाशक आणविक विकिरण) हमारे प्रबुद्ध नेतृत्व के मस्तिष्कों को भी विकृत कर चुकी है, उन्हें तो स्वयं को शीर्ष में प्रचारित करने का रोग हो गया है। इसीको कहते हैं - चित्त भी मेरी पट भी मेरी। विज्ञानवादियों को अब स्वयं को टेक्नोलॉजिस्ट कहना अधिक अच्छा लगता है। उन्हें लगता है कि टेक्नोलॉजी से वे विश्व में स्वर्ग बनाकर रख देंगे। उन्हें ऐसा विश्वास कैसे होता है? यह तो वही जानें।

हम जब अपने पौराणिक इतिहास के महान टेक्नोक्रेटों के बारे में पढ़ते हैं, तो सत्य कुछ भिन्न दिखाई देता है। पुराणों में इन टेक्नोलॉजिस्टों को मायावी और मायापति कहा गया है। इन दोनों शब्दों का अर्थ होता है जो स्वयं विज्ञान के जनक और नियंत्रक हैं, वे ही अपनी माया (टेक्नीक) से समस्त सृष्टि की रचना और स्थिति को उसी माया अर्थात् टेक्नीक की सहायता से स्वयं में विलीन कर लेते हैं। यदि आज के वैज्ञानिक और टेक्नोलॉजिस्टों को गीता के 'मम माया दुरत्यया' (गीता 7/14) का ज्ञान होता, उस पर गहन चिंतन और मनन किये होते, तो टेक्नोलॉजी और उसके 'हाईटेक' उत्पादों को सब रोगों की एक मात्र औषधि होने के अतिरेक की अनियंत्रित मानसिकता पर अवश्य ही विचार-विमर्श करते। यहाँ पर एक ही उदाहरण हमारे कथन को प्रमाणित कर देता है। उत्तर प्रदेश के नोएडा प्राधिकरण को आधुनिक टेक्नोलॉजी के आधार पर एक 'हाईटेक सिटी' की तरह विकसित किया गया। परिणाम उलटा हुआ, जिस गति से 'नोएडा' में भ्रष्टाचार, अमानवीयता और अपराध बढ़े, उसने सम्पूर्ण उत्तर प्रदेश और दिल्ली को भी अपनी चपेट में ले लिया। यही स्थिति अन्य नगरों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

की भी है, जहाँ 'हाईटेक सिटी' बनाये गये हैं। इस प्रकार अविवेकपूर्ण अहंकार से निर्मित 'हाईटेक सिटी' अब 'हायटेक' में परिवर्तित हो गयी हैं।

विश्व की प्राचीन सभ्यताओं को देखेंगे, तो ज्ञात होता है कि जो भी अपने समय की हाईटेक सभ्यताएँ थीं, वे अब 'हायटेक' में परिवर्तित हो चुकी हैं। प्राचीन मिस्र, यूनान, रोम, असीरिया, बेबीलोन और चीन की तत्कालीन हाईटेक सभ्यताएँ 'हाय-हाय' में परिवर्तित होकर ध्वस्त हो गयीं।

इतनी दूर जाने की भी हमें आवश्यकता नहीं है। साम्राज्यवाद इसी हाईटेक सभ्यता का प्रारंभ काल था। इसी हाईटेक सभ्यता ने प्रथम और द्वितीय विश्व युद्धों का निर्माण कर विश्व में हाय-हाय मचा दी। साम्यवाद का उदय इसी हाईटेक सभ्यता से होता है, जिसमें सम्पूर्ण मानवता को अणु-परमाणु बमों के ऊपर बैठने के लिये बाध्य कर दिया। हिरोशिमा, नागासाकी, कोरिया युद्ध, वियतनाम युद्ध, अफगानिस्तान का आतंकवाद, ईराक युद्ध, न्यूयार्क के वर्ड ट्रेड सेन्टर के टावरों की अकाल मृत्यु, ट्यूनीशिया, मिश्र, लीबिया, यमन सीरिया आदि देशों में हो रही हाय-हाय इसी हाईटेक (उच्च टेक्नोलॉजी) के दुष्परिणाम हैं।

14. टेक्नोलॉजी का गणपति स्वरूप - यदि विश्वभर के टेक्नोलॉजिस्ट, टेक्नोलॉजी के आकर्षण और उसके अव्यक्त (अदृश्य) दुष्प्रभावों की एक श्रृंखला के रूप में अध्ययन करें, तो तभी उनकी समझ में गीता के ''मम माया दुरत्यया' (मेरी माया से पार पाना अति कठिन है) का सत्य समझ में आ जायेगा। विज्ञान और वैज्ञानिक जो सोच रहे थे कि वे धरती को स्वर्ग बना देंगे, ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। टेक्नोक्रेटों की टेक्नोलॉजी ने नदी, वृक्ष, वातावरण, मनुष्य के मन और शरीर, वायु, पृथ्वी, सागर और आकाश सब कुछ को विकृत कर दिया है। आज प्रत्येक के मन में यह भाव आता है कि क्या यही वर्तमान टेक्नोलॉजी की बुद्धिमता है?

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

हम अपने प्राचीन शास्त्रों का गहन अध्ययन करें, तो वे बताते हैं कि मन, चेतना और बुद्धि का निवास शरीर-राज्य में रहने वाले सभी भूतों (प्राणियों, जीवों) में होता है। भूतानां अस्मि चेतना (गीता 10/22) - भूतों (जीवों) मैं चेतना हूँ। तात्पर्य यह है कि सम्पूर्ण प्राणियों में जो चैतन्य शक्ति है, वह ईश्वर (कृष्ण) का ही स्वरूप है, उससे भिन्न नहीं है। पुराणों में इस चेतना को धारण करने वाले भूतों (जीवों) को 'शिवगण' कहा गया है। इनके अधिपति को गणेश कहा गया है। इन गणेशजी का वाहन 'मूषक' है। वैज्ञानिक टेक्नोक्रेटों को प्राचीन शब्दावली को समझने में कठिनाई होती है। यह कठिनाई हम सबको भी है, क्योंकि हमें शब्दों का रूढ़ अर्थ करने का अभ्यास हो गया है।

गणेशजी के वाहन मूषक का विज्ञान सम्मत अर्थ है - शरीर स्थित वह ऊर्जा, जो सूक्ष्म द्रव्य के रूप में पर्वताकार शरीर की अति सूक्ष्म रक्त एवं स्नायु तंत्रिकाओं में 'मूषक' की तरह घुस जाती है। 'मूषक' यांत्रिकी या टेक्नोलॉजी ऊर्जा को भिन्न-भिन्न मात्राओं (क्वान्टम) में उत्सर्जित करती रहती है। यही ऊर्जा रक्त संचार से बिलों में जाकर प्राणियों की चेतना को बनाये रखती हैं। इस मूषक यांत्रिकी का एक समग्र (सामूहिक) स्वरूप भी होता है। इसी समग्र रूप को 'गणेश' कहा गया है। यह 'गणेश' टेक्नोलॉजी (यांत्रिकी) उन सूक्ष्म गणों (bacteria - सूक्ष्म कृमि) का संचालन करती है, जिन्हें पुराण 'शिवगण' कहते हैं। शरीर में स्थित ब्रह्माण्ड में कब क्या करना है, उसीका नियंत्रण यह 'गणपति' प्रणाली करती है। इसी अर्थ में 'गणपति' को बुद्धि का देवता कहा जाता है। जब हम इस यांत्रिकी का विज्ञान सम्मत अध्ययन और विवेचन करते हैं, तो हमें ज्ञात होता है कि जिस बुद्धि को आज का मनुष्य अपनी बुद्धि कहता है, वह उन सूक्ष्म जीवाणुओं और उनके नियंत्रक 'गणेश' की देन है। यही बात हमारे शास्त्र कहते हैं, मनुष्य का बौद्धिक प्रसार उन सूक्ष्म सत्ताओं द्वारा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होता है, जो अपने हितों को साधने के लिये प्राणियों के स्थूल शरीरों से तदनुसार कार्य कराती हैं। इन जीवाणुओं की प्रवृत्ति अनन्त की ओर जाने की होती है, जबकि प्राणी शरीर मरणशील होता है। अतः मानव को अपनी प्रकृति के अनुरूप अपने संसाधनों की प्राप्ति के लिये उसी प्रकार की टेक्नोलॉजी (या बाह्य यांत्रिकी) का उपयोग करना चाहिये जो मानव के भौतिक (स्थूल) और अभौतिक (मानसिक या आत्मिक) स्वरूप में संतुलन बनाये रखे। वैज्ञानिकों को वेदों, उपनिषदों और पुराणों के विज्ञान को जानना अति आवश्यक है। शास्त्रों का विज्ञान शाश्वत या ईश्वरीय विज्ञान है, जबकि आज की प्रौद्योगिकी इस शाश्वत विज्ञान की नकल है। टेक्नोक्रेटों ने नकल तो कर ली है, परन्तु इसे कैसे समाज और राज्य में लगाया जाना चाहिये, इसे वे नहीं जानते हैं। इसी का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उन्हें शास्त्रीय ज्ञान-विज्ञान अर्थात् शरीर-ब्रह्माण्ड कीं यांत्रिकी (टेक्नोलॉजी) का अध्ययन आवश्यक है। यह अध्ययन शास्त्रीय ढंग से ही करना होगा अन्यथा इसका अध्यात्मिक लाभ हमें नहीं मिल सकता है।

15. यम-नियमों की सार्वभौमिकता - टेक्नोक्रेटों का अतिरेक कुछ समय तक ही विकास की तरंगों के साथ अठखेलियाँ करता है। कुछ काल के पश्चात् इसमें अति उपभोग, उद्देश्य विहीनता, भागम-भाग से अनेकानेक विकृतियाँ उत्पन्न होकर यह विकास सुख-दुख, दिन-रात की अनुलंघनीय शाश्वत चक्रीय नियमों के अनुरूप ह्रास या पतन की ओर जाने लगता है। इस स्थिति में ईश्वर भी प्रलय के प्रभाव को रोक नहीं सकता या कहें कि वह भी इस शाश्वत धर्म के अनुरूप चलता है। भागम-भाग वाली हाईटेक सभ्यता के स्वरूप के बारे में हमें ऋग्वेद के विज्ञान को भी देख लेना चाहिये। निरुक्त (12/8) में ऋग्वेद में आये 'तुरश्चिद् राजा' (7/4/2) की व्याख्या करते हुए यास्क ने लिखा है - तुर, त्वरा या तीव्र गति वाले चित्त को 'यमराज' ही जानना चाहिये। सारांश है कि अति त्वरा,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

-अति गतिशीलता या भागम-भाग वाली टेक्नोलॉजी 'यमराज' अर्थात् विनाश का ही दूसरा स्वरूप है। हाईटेक से उत्पन्न त्वरा के दुष्परिणामों को विश्व भर में आज अनेक रूपों में देखा जा सकता है। वेदों में वैज्ञानिक दृष्टि रखें, वेदों का रहस्य खुलता जायेगा। पुराणों में इस अति औद्योगिकरण और उसके अति उपभोग तथा इससे उत्पन्न विकिरण और मानसिक त्रास को मन या आत्मा के दर्पण में मलिनता (कलि, कालिख) का आ जाना, कहा है। जब तक इस कालिमा को साफ नहीं किया जाता है, इस शरीर ब्रह्माण्ड की सात्विक (मलिनता रहित) प्रवृत्तियाँ जाग्रत नहीं होती हैं। यही अराजकता का काल कहा जाता है। पुनः शरीर-राज्य में अनुशासन और 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की भावना आती है, वही नवीन राज्य की व्यवस्था का आधार होता है। इस अनुशासन का आधार यम-नियम होते हैं, यही मलिनता निवारण के आधार होते हैं। पतंजलि का मानना है कि यम तभी सफल होते हैं जब इनकी सार्वभौमिक स्तर पर स्वीकृति हो जाती है। लोक में यह सार्वभौमिकता और अधिक महत्त्वपूर्ण है। राज्य, शासक, शासन और जन सभी को हर क्षण इन्हें बनाये रखने की चैतन्यता ही उसकी सार्वदेशिक स्वीकृति है। इसमें समस्त विश्व (संयुक्त राष्ट्र) भी आ जाता है। यदि सार्वभौम रूप में 'यमों' को न मानकर व्यक्तिरूप में इसे माना जाता है तो यह कभी सफल नहीं होता है, क्योंकि ऐसे में दूसरा यमों के पालन कर्ता को दुर्बल मानकर उसके रहे-सहे साधनों को भी छींन लेता है। यह व्यक्ति स्तर पर हो या राज्यों के स्तर पर हो, दोनों अवस्था में लागू होता है। आज 'यमों' की सार्वभौम अनुपस्थिति को सम्पूर्ण विश्व भोग रहा है। स्पष्ट है कि जो लोग व्यक्तिगत रूप से चरित्रवान बनने से विश्व के चरित्रवान बनने की बात करते हैं, यथार्थ में वे दुष्टों से राज्य के नियंत्रण को हटाकर उन्हें और उद्दण्ड हो जाने की सलाह देते हैं। परिणाम हम सभी, पूरे विश्व में देख सकते हैं। लौकिक राज्यों में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विश्व के इलीटस् (मनीषियों) ने राज्य की आत्मा के दर्पण में उत्पन्न मलिनता (कालिख, अराजकता, लूट से उत्पन्न धन-संपत्ति) के निवारण की कोई टेक्नोलॉजी विकसित नहीं की है। यही कारण है कि लौकिक राज्यों में रक्त क्रांति द्वारा या सत्ता का बलात् अपहरण कर परिवर्तन होता है। इसमें पूर्व से आयी मलिनता का शुद्धिकरण नहीं हो पाता है। परिणामतः राज्यों में अराजकता एवं अपराध नये-नये रूपों में पनपने लगते हैं। जब लोक राज्यों में 'सर्वे भवन्तु सुखिनः......' की भावना होती ही नहीं, अनुशासन अनुपस्थित होता है, सामूहिक मन की मलिनता बनी रहती है तो 'अध्यात्म' अर्थात् शांति कहाँ से आ सकती है?

16. अध्यात्म विद्या और टेक्नी विद्या – यहाँ पर 'अनुशासन' का अर्थ पतंजलि योग सूत्र के प्रथम अध्याय के प्रथम सूत्र 'अथ योगानुशासनम्' से है। 'योग' का अर्थ वही है जो गीता (2/48) एवं अन्य शास्त्रों में है, अर्थात् अनुपलब्ध की प्राप्ति के लिये साधन और ज्ञान सहित सम्पूर्ण टेक्नोलॉजी (यांत्रिकी) का प्रयोग ही 'योग' है। यह 'योग' शरीर-राज्य के लिये है। वहाँ इसे ईश्वर और जीव के साक्षात्कार को ही 'योग' कहा जाता है। इस 'योग' में ही ईश्वर प्राप्ति की सम्पूर्ण टेक्नोलॉजी समाहित रहती है। 'योगः कर्मसु कौशलं' (गीता 2/50) स्वयं बता देता है कि कौशल ही टेक्नीक है तथा टेक्नीक, टेक्नोलॉजी से ही उत्पन्न होती है। कर्म भी टेक्नीक और टेक्नोलॉजी के माध्यम से सम्भव है होता। अतः शरीर-राज्य हो या लोक-राज्य दोनों के लिये टेक्नोलॉजी आवश्यक है। इससे स्वतः निष्कर्ष निकल आता है कि अध्यात्म में भी टेक्नोलॉजी का अध्ययन आवश्यक है। शरीर यांत्रिकी के अति प्रयोग से जैसा कलियुग आता है और उसके बाद विनाश आता है। इन्हीं सब स्थितियों का अध्ययन कर ऋषियों ने निष्कर्ष निकाला कि लोक-राज्य में टेक्नोलॉजी का अति प्रयोग नहीं किया जाना चाहिये अन्यथा लोक-राज्यों में भी गृह-युद्ध,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आतंक, विश्व युद्ध, क्रांति आदि को, कोई भी सत्ता रोक पाने में सफल नहीं हो सकती है।

लौकिक राज्यों में 'योग' यांत्रिकी (टेक्नोलॉजी) का प्रयोग अप्राप्ति की प्राप्ति के लिये नहीं वरन् पहले से 'प्राप्त' की असीमित वृद्धि (केन्द्रीकरण) के लिये किया जाता है । अतः टेक्नोक्रेटों को ऐसी यांत्रिकी विकसित करनी होगी जिससे 'प्राप्तों' की अतिप्राप्ति पर रोक लगकर 'अप्राप्तों' को प्राप्ति हो सके । यही सही अर्थों में राज्यों का 'योग' है । शरीर-राज्य में 'सिद्ध्यसिद्ध्योः उच्यते' (गीता 2:48) का अर्थ होता है जिनको साधन प्राप्त हो जाते हैं वे सिद्ध्य हैं तथा जिन्हें साधन उपलब्ध नहीं होते हैं वे असिद्ध्य कहे जाते हैं । साधनों का असिद्ध्य तक पहुँचाना ही 'योग' है, जिसमें 'समानता' का प्रादुर्भाव होता है । ठीक यही स्थिति जब तक लोक-राज्यों में उत्पन्न न होगी 'समत्व-योग' मृग मरीचिका बना रहेगा । 'सिद्ध्यसिद्धियोः समोभूत्वा समत्वं योग उच्यते (गीता 2:48) । 'हैं' (धनी) और 'नहीं है' (अति निर्धन) के मध्य समानता लाने की टेक्नोलॉजी से उत्पन्न कौशल (टेक्नीक, गीता 2:50) ही योग कहा जाता है । पुनः यह निष्कर्ष निकलता है कि आधुनिक वैज्ञानिकों और टेक्नोलॉजिस्टों को 'अध्यात्म जगत' का ज्ञान होने पर ही राज्यों की अनेकानेक समस्या का समाधान हो सकता है । अतः विश्व के टेक्नोलॉजिस्टों को 'अध्यात्म विद्या' का अध्ययन आवश्यक होना चाहिये । गीता में भगवान कृष्ण कहते हैं -

'अध्यात्म विद्या विद्यानां वादः प्रवदताम् अहम् (10/32) ।' सभी विद्याओं में अध्यात्म विद्या ही श्रेष्ठ है और यह मेरा ही स्वरूप है ।

यहाँ पर 'अध्यात्म विद्या' का अर्थ शरीर से सम्बन्धित वह ज्ञान-विज्ञान (शाश्वत टेक्नोलॉजी) है जो मनुष्यों की मानसिक उद्विग्नता निवारण करने का साधन होती है । इसी अर्थ में पहले 'स्वभावो अध्यात्म उच्यते' (गीता 8/3) में कहा गया है । इसका तात्पर्य होता है कि स्वभाव

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

(चंचलं मनहि कृष्ण, गीता 6/14) को नियंत्रित करने के लिये जो उपाय (टेक्नीक) किये जाते हैं, वह अध्यात्म विद्या है। स्पष्ट है कि टेक्नीक, बिना टेक्नोलॉजी के उत्पन्न नहीं होती है। अतः अध्यात्म विद्या में मानसिक उद्वेग (चंचलता) की शांति के साथ-साथ स्थूल उद्देश्य की पूर्ति के साधन और टेक्नोलॉजी (यांत्रिकी) का अध्ययन भी समाहित है। जिस टेक्नोलॉजी या वैज्ञानिक कौशल को आँख बन्दकर विश्वभर में संप्रसारित कर दिया गया है यह सोचकर कि यह मानवीय दुःखों का निवारण करेगा, परन्तु ऐसा न हो सका। इसके विपरीत आज इस मायावी टेक्नोलॉजी ने विश्व को घोर मानसिक त्रास और घोर संकट में डाल दिया है। गीता में भगवान कृष्ण ने इसी अर्थ में इस माया के बारे में कहा है, मनुष्य आकर्षित होकर जिस वैज्ञानिक माया के पीछे सुख पाने के लिये दौड़ता है, वह नहीं जानता है कि एक दिन यही माया उसके पराभव का कारण होती है। यही मम माया दुरत्यया (7:14) है, जिससे कोई पार नहीं पा सकता है। संत कबीरदास ने इस टेक्नोलॉजी के आधारभूत साधन (मिट्टी) के लिये कहा है -

माटी कहे कुम्हार से तू क्या गूंथे मोहि।
इक दिन ऐसा आयेगा मैं गूंथूंगी तोहि ।।

17. विज्ञान और कलियुग - विश्वभर में आज वही बात प्रत्यक्ष दिखाई देती है, जैसी पुराणों में 'कलियुग' की बताई गयी है। यह ज्ञान का अंधकार ही है कि विज्ञान और उसके मर्मज्ञ आज भी 'कलियुग' को एक पौराणिक कल्पना ही समझते हैं। यही कारण है कि वे वैज्ञानिक आविष्कारों और उपकरणों का प्रयोग लोक हित के लिये कम और अपने-अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिये अधिक कर रहे हैं। हमारे प्रबुद्ध लोग वैज्ञानिक उपकरणों का इतना अंधाधुंध उत्पादन और अनावश्यक दुष्प्रयोग कर रहे हैं कि इसने मनुष्यों की नैतिकता और धारणा शक्ति के मस्तक को काटकर वृक्ष की सबसे ऊँची शाखा पर रख दिया है जिसे आज संविधान,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राज्य और संयुक्त राष्ट्र कहा जाता है । वर्तमान राष्ट्रीय राज्य और संयुक्त राष्ट्र उन्हीं नीतियों और टेक्नोलॉजी को लागू करते हैं जिनसे कुछ विशिष्ट देशों और लोगों का भला होता है । सिद्धान्त रूप में राज्यों और संयुक्त राष्ट्र ने जिस 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की भावना को ओढ़ रखा है, वह केवल एक छद्म वेश है । अब समय आने ही वाला है जब सभी छद्मवेशी सिद्धान्तों की आड़ में घोर अराजकता को ही अपनी रक्षा का साधन बना लेंगे । ऐसे में कोई भी इस अराजकता के त्रास से न बचेगा । इसीको क्रांति, युद्ध, विश्व-युद्ध या गृहयुद्ध कहते हैं । इसीका नाम 'कलियुग' है ।

18. वैज्ञानिकों का पाखण्डी ज्ञान – 'कलियुग' का विवेचन अभी जारी है । आज का वैज्ञानिक जगत 'कलियुग' के स्वरूप और उसकी अवश्यम्भाविता से अनभिज्ञ हैं । वैदिक काल में अथर्ववेद में इन्द्रजाल, वरुण के पाश और जादू का जैसा वर्णन है, पुराणों ने उसी को कलियुग कहा है । बाईबल और कुरान शरीफ़ में भी जादू का वर्णन है । आज जिन कलपूर्जों से उत्पन्न कालिमा (कलि, विकिरण, त्रास) के ताप से सम्पूर्ण विश्व दग्ध हो रहा है, वही 'कलियुग' या 'कलिकाल' है । इस काल में वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी प्रौढ़ होकर अपने चरम स्तर पर पहुँच जाती है । इस प्रौद्योगिकी का प्रयोग व्यक्ति अपने आवश्यक स्वार्थों को साधने में इतना निमग्न हो जाता है कि वह दूसरों के आवश्यक हितों को भी रौंद देता है । कल-कारखानों और यातायात के साधनों का शोर, परमाणु रियेक्टरों का विकिरण और रेडियो ऐक्टिव प्रभाव मानव मन के दर्पण को इतना मलिन कर देता है कि उसे अच्छे-बुरे में कोई अन्तर नहीं दिखाई देता है । पुराणों और उपनिषदों में 'मन' को ही मनुष्य कहा गया है । जब मन स्वच्छ होता है तभी लोक में 'सर्वे भवन्ति सुखिनः.......' की भावना या आदर्श बलवान होती है । जब प्रौद्योगिकी के विकारों से मन मलिन हो जाता है, तो शरीर राज्य में 'कलियुग' का आगमन हो जाता है । यहाँ पर इसी को आधार

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बनाकर लौकिक प्रौद्योगिकी की विकृतियों द्वारा मनुष्यों के मन (विचारों) को दूषित कर देने की बात कही जा रही है। केवल अपने स्वार्थों की पूर्ति में लगे रहने को मति-भ्रष्ट होना भी कहा गया है। जब मनुष्यों की मति भ्रष्ट हो जाती है, तो वे मानवीय धारणा शक्ति से च्युत होकर लौकिक टेक्नोलॉजी के प्रवाह के अनुरूप चलने को बाध्य हो जाते हैं। इसको हम दूसरे रूप में कह सकते हैं कि मति-भ्रष्ट (मन के प्रकाश में कालिमा) होने पर मनुष्य वैज्ञानिक यांत्रिकी के समक्ष स्वयं का समर्पण कर देता है या उसके समक्ष घुटने टेक देता है।

मनुष्य जब प्रथम श्रेणी के वैज्ञानिक कौशल को छोड़कर द्वितीय स्तर की मानव निर्मित टेक्नोलॉजी के समक्ष स्वयं को समर्पित कर देता है; तो मानव की बौद्धिक क्षमता, लोगों के प्रति उसका लगाव तथा परिस्थिति से जूझने की क्षमता (समस्याओं से जूझने की धारणा या आत्मबल) सब कुछ को प्रौद्योगिकी जन्य सुख-सुविधाओं की लिप्सा निगल जाती है।

लौकिक टेक्नोलॉजी जब अपने पूर्ण स्वरूप में व्यक्ति, समाज, राज्य और विश्व में प्रभुत्व स्थापित कर लेती है, तो उसका स्वरूप भी शरीर-टेक्नोलॉजी की तरह के 'कलियुग' में बदल जाता है। क्यों ऐसा होता है? इस पर वैज्ञानिक बुद्धिवादियों को विचार करना होगा तथा लौकिक (भौतिक) टेक्नोलॉजी के अतिवादी स्वरूप पर नियंत्रण रखना ही होगा अन्यथा हम सभीको अपनी सभ्यता के साथ विनाश के लिये तैयार रहना होगा। यही भविष्यवाणी अध्यात्मिक टेक्नोलॉजी करती है।

19. अध्यात्मिक राज्य और लोक कल्याणकारी राज्य - पुराणों में कलियुग का जैसा वर्णन है, उसकी एक झलक हमारे वर्तमान अतिवादी टेक्नोक्रेटों को भी देख लेना चाहिए। श्रीमद्भाग्वत्, द्वादशस्कन्ध, अध्याय एक में कलियुग के राजवंशों का वर्णन है। शास्त्रों में लोक की तरह का राजा या शासक (एक व्यक्ति की तरह) नहीं होते हैं। शास्त्रों के राजा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विश्व-शरीर के भीतर विभिन्न क्षेत्रों का नियंत्रण एवं शासनकर्ता, वहाँ स्थित साधन एवं क्रियाशील यांत्रिकी का व्यक्तित्व होता है। इन राजाओं के नाम लौकिक राजाओं की तरह रूढ़ अर्थ वाले नहीं वरन् गीता के 'गुण, कर्म, विभागशः' के आधार पर रखे जाते हैं। आधुनिक पश्चिमी और भारतीय विद्वता इन राजाओं को लौकिक भारत में या अपने-अपने लोक राज्यों में खोजते हैं (जैसे बाईबल और कुरान में कहे गये राजा)। जब उन्हें यूरोपीय इतिहासविदों के अनुरूप ये राजा या राजवंश नहीं मिलते हैं, तो मानसिक उद्वेग में फँसकर पुराणों पर ही प्रहार करने लगते हैं।

जब हम 'राजा' की बात करते हैं, तो राजा या राज्य का अर्थ 'रंजन करने वाला' प्रधान होता है। शरीर के भीतर जनरंजन अर्थात् जन-जन की आवश्यकताओं की पूर्ति उसमें स्थित आहार (द्रव्य) और शरीर के भीतर की क्रियाशील यांत्रिकी द्वारा होता है। इन दोनों को व्यक्तिवादी बनाकर उसीको 'राजा' कहा जाता है। यह 'राजा' (रंजनकारी सत्ता) केवल मनुष्यों में ही नहीं वरन् संसार के प्रत्येक जीव (प्राणी) के शरीर में स्थित होते हैं। इस अर्थ में ये राजा शाश्वत होते हैं, केवल नाम में भिन्नता होती है। शरीर-राज्य में राजा (शासक) और राज्य अलग-अलग न होकर दोनों एक ही होते हैं। प्रश्न किया जाता है कि शरीर-राज्य में प्रजा (लोक) का रंजन कौन करता है? इसका उत्तर हम अंग्रेजी शब्द स्टेट (state, राज्यं) के माध्यम से स्पष्ट कर सकते हैं। इश् या इस् का अर्थ आक्सीकृत (परिपक्व द्रव्य) होता है। उच्चारण करने में 'इस्' के साथ लगे 'इ' का उच्चारण नहीं किया जाता है। लोक में 'स्कूल' को इस्कूल तथा स्टेट को इस्टेट कहते हैं। अंग्रेजी में इस्टेट (Estate) को एक अलग शब्द बना लिया गया है। इसका अर्थ धन-संपत्ति-भवन होता है। शरीर-राज्य की या शरीर के भीतरी जीवों का इस्टेट (Estate) अन्न या आहार होता है। जब यह 'इस्टेट' शरीर के भीतर जाता है, तो अपनी रंजन या क्रिया शक्ति के साथ इसीको राज्य या राजा कहते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भारत और विश्व के विद्वानों को इस व्युत्पत्ति को समझना अति कठिन लगता है, परन्तु यदि वे आगे की व्याख्या को ध्यान से देखेंगे, तो उन्हें 'इस्टेट' और 'स्टेट' का रहस्य समझ में आ जायेगा। भारत में अनेक भाषाओं में 'टेट' शब्द बोला जाता है। 'टेट' का अर्थ कमर या भोजन तंत्र होता है। स्टेट की व्युत्पत्ति 'छ+टेट' या 'स+टेट' - जिसकी 'टेट' में होता है, वही स्टेट कहा जाता है। यहाँ पर 'क्या है!' इसकी व्याख्या नहीं है। शरीर के 'टेट' में जो वस्तु होती है, वह 'अन्न' ही होता है। अतः 'अन्न' का टेट में होने पर ही शरीर राज्य रूप में क्रियाशील हो जाता है। इसी राज्य को जब व्यक्तिवाची बना दिया जाता है, तो वही 'राजा' (शासक) हो जाता है। जो खाने (रंजन) के साधन देता है, वही राजा या किंग है। अंग्रेजी King में k (क) का अर्थ करना है तथा इङ् या इंग् द्रव्य (अन्न) में निहित ऊर्जा या पोषक तत्त्व है, जिससे प्रजा का रंजन होता है।

अर्थशास्त्र के प्रणेता आचार्य कौटिल्य ने 'टेट' के स्थान पर 'नीवी' शब्द का प्रयोग किया है। लोक में 'नीवी', नाड़ा, करधनी, फेटा सब समानार्थक शब्द हैं। नीवी, नाड़ा अथवा धुरा (अरा) इस अर्थ में कहा जाता है कि जैसे वस्त्रों को कमर में नाड़े या नीवी से बाँध लेने से व्यक्तियों का स्वरूप परिवर्तित हो जाता है, उसकी शिथिलता ओज में बदल जाती है, उसी प्रकार शरीर के भीतरी टेट या नीवी में अन्न (धन-संपत्ति) के बँध जाने से शरीर-राज्य के सभी जीव उसी एक से बँध जाते हैं, वही उनके आकर्षण का केन्द्र अथवा रंजन का केन्द्र हो जाता है। आचार्य कौटिल्य ने 'नीवी' का अर्थ 'राजकोष' किया है।[1] बात एक ही है, शरीर-राज्य मैं कोष (धन, संपत्ति, अन्न भंडार) को ही पेट, टेट, नीवी, नाड़ा, अरा आदि कहा जाता है। शास्त्र इसे नाभि कहते हैं, जहाँ से साधनों को नया (लाया) भइ (जाता है)

---

1. कौटिल्य अर्थशास्त्र, अधि. 2, प्रकरण 24, अ. 8; उद्धृत - भारत के लोगों का संविधान एवं दर्पण, ले. हरिदत्त शर्मा, पृ. 76-78।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वही नाभि है। लोक में आज उसी राजा को राष्ट्रपति, राजा, शासक, मंत्री आदि कहा जाता है, जिनकी मूल भावना होती है कि वह अपने-अपने राज्य के जन-जन का रंजन करेंगे अर्थात् उन्हें जीवित रहने के साधन देंगे और उनके जीवन और संपत्ति की रक्षा करेंगे। गीता (9/22) में इस लोक रंजन को 'योग क्षेम' कहा गया है। 'योग' का अर्थ होता है, राज्य में जहाँ अभाव है, वहाँ साधनों की पूर्ति करना तथा 'क्षेम' का अर्थ होता है, जो पहले से है, उसकी रक्षा करना, शांकरभाष्य के अनुरूप यह व्याख्या है। विश्व में देखा जाय तो किसी भी राज्य में 'रंजन शक्ति' और 'योगक्षेम' का भाव देखना अति दुष्कर है। हाँ, उन्हें ये दोनों सत्य एक साथ दिखाई दे जाते हैं, जो सत्ता में होते हैं और अपने समर्थकों सहित सत्ता की विलासिता से लबालब भरे होते हैं।[2] यही 'कलि' का प्रभाव है। सिद्धान्त रूप में राजा या राज्य के शास्त्रीय अर्थ और वर्तमान लोक कल्याणकारी राज्य की अवधारणा में समानता है।

20. हाई-टेक्नोलॉजी का कलियुग से सम्बन्ध - जब राज्य में सभी प्रकार की प्रौद्योगिकी - अर्थतंत्र, राज्यतंत्र और यांत्रिकीतंत्र को राज्य के शासक अपने ही हित में गतिवान बनाये रखने के लिये स्वयं को नैतिक, आर्थिक, राजनीतिक मर्यादाओं से ऊपर रखना प्रारंभ कर देते हैं, तो वहीं से अराजकता, क्रूरता और सभी प्रकार की अमानवीयता का प्रारंभ हो जाता है। राज्य की सभी प्रकार की हाई या सुपर टेक्नोलॉजी जब तीव्र यांत्रिक गति का रूप ले लेती है, उसी का नाम कलियुग है। कल अर्थात् यंत्रों के अति प्रयोग से उत्पन्न विषाद (विकिरण, मानसिक, शारीरिक एवं दैविक ताप) को ही कलि अर्थात् कालिमा या प्रदूषण कहा गया है। जिस कालखण्ड में यह अपने पूर्ण रूप में होती है, उसीको 'कलियुग' अथवा प्रदूषण के साथ जुड़ा हुआ समय कहा जाता है।

---

1. भारत के लोगों का संविधान एवं दर्पण, ले. हरिदत्त शर्मा, पृ. 16।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कलियुग और हाई टेक्नोलॉजी का सम्बन्ध बहुत प्रगाढ़ है । दोनों एक दूसरे के पर्याय हैं । जैसे-जैसे टेक्नोलॉजी अपनी पूर्णता की ओर जाती है वैसे-वैसे घोर कलियुग आता जाता है । 'कलियुग' का जो वर्णन हमें पुराणों में मिलता है उसे आज हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं । टेक्नोलॉजी की अति गतिशीलता के कारण यह कलि काल आता है । ऋग्वेद (7/4/2) में टेक्नोलॉजी के अति वेग को त्वरा कहा है जो लोक में अन्ततः 'यमराज' को लाती है, उसी का नाम विनाश भी है ।

21. अध्यात्म और राजनीति - भारत और विश्व के वैज्ञानिकों, विद्वानों और धर्माचार्यों के मन में राज्य और राजनीति का ऐसा खौफ भर गया है कि वे अध्यात्म को राज्य से भिन्न वस्तु मानने लगे हैं । इनके क्रिया कलाप इस भाव को बल देते हैं कि राज्य के बिना अध्यात्म संभव है। शास्त्र कहते है, अध्यात्म का मूल आधार राज्य ही है । कहा गया है - सर्वे धर्मा राजधर्मप्रधानाः (महाभा. शां. प. 63:27), सभी धर्मों में राजधर्म प्रधान है। सर्वा विद्या राजधर्मेषु युक्ताः सर्वे लोका राजधर्मे प्रविष्टाः (महाभा. शां. प. 63:29), सारी विद्याएँ राजधर्म से युक्त हैं तथा सभी लोक राजधर्म से रक्षित हैं । लोगों की राज्य के बारे में जो धारणा है, उसका कारण हमारे शासकों द्वारा दैत्यों के आचरण को अपना लेना है, उन्हें इस बात का रंचमात्र आभास नहीं होता है कि वे असुर या दैत्य राज्य का संचालन कर रहे दैत्य ही हैं । चूंकि ये मनुष्यों के शासक होते हैं, मनुष्य की तरह आकार-प्रकार के होते हैं, अतः वे भी तथा अन्य लोग भी उन्हें मनुष्य ही मानते हैं । हमारे शास्त्रीय चिन्तन को गलत दिशा देना, विश्व का दुर्भाग्य है । आज सभी लोग राक्षसी कृत्यों को सम्पन्न करने वालों को भी मनुष्य ही मानते हैं ।

राज्य और अध्यात्म में शत्रुता का एक प्रमुख कारण स्वयंभू धर्माचार्यों द्वारा अपने पाखंडी ज्ञान के अनुरूप राज्य को चलाने के लिये

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

बाध्य किये जाने की प्रवृत्ति रही है। धर्माचार्यों की परेशानी यह है कि वे शास्त्रीय शब्दों का विज्ञान सम्मत अर्थ (शरीर यांत्रिकी के अनुरूप) न कर शब्दों का रूढ़ अर्थ कर देते हैं और उसीको वे 'शास्त्र वचन' कहकर राज्य के समक्ष अनेकों परेशानियाँ खड़ी कर देते हैं। विश्व में सांप्रदायिक हिंसा इसी अधूरे पाखण्डी ज्ञान का परिणाम है। इस अधूरे ज्ञान का निवारण आज संभव हो गया है, क्योंकि विज्ञान ने उन बहुत-सी बातों को ढूंढ लिया है जो शास्त्रों में पहले से विद्यमान हैं। अभी भी वैज्ञानिक और टेक्नीविद् इस बात को मानने के लिये तैयार नहीं हैं कि टेक्नोलॉजी और अध्यात्म में परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है। इस क्षेत्र में मैंने एक प्रयोग किया, बहुत से विद्वानों, टेक्नीविदों, भौतिक शास्त्रियों, रसायनज्ञों, विधि शास्त्रियों, अर्थ शास्त्रियों, राज शास्त्रियों, धर्माचार्यों, संस्कृत के पंडितों, प्रशासनिक अधिकारियों, सांसदों और मंत्रियों आदि को अपनी पुस्तकें दीं, जो इसी तरह की व्याख्या के अध्यात्म से सम्बन्धित हैं। किसी ने भी इन पुस्तकों के मूल रहस्य को समझने का प्रयत्न नहीं किया। मुझे इन विद्वानों से कोई प्रतिक्रिया नहीं मिली। इससे मैंने यह निष्कर्ष निकाला कि टेक्नीविदों और वैज्ञानिकों को भी अध्यात्म को समझने में अभी काफी समय लगेगा। जब घोर मानसिक तनाव, अस्थिरता, चंचलता अपने चरम पर पहुँचेगी तभी उन्हें अध्यात्म औा यांत्रिकी की परस्पर निर्भरता का रहस्य समझ में आयेगा और तब तक बहुत देर हो चुकी होगी।

22. मानव और दैत्य राज्यों में अन्तर - मनुष्य वे सभी प्राणी होते हैं जिनका 'मन' होता है। मनुष्य (जीव, प्राणी या पशु) मरणधर्मा होते हैं, इसलिये उनका मन न तो देवताओं की तरह अमर होता है और न राक्षसों की तरह स्वेच्छाचारी होता है। यह इसलिये कि केवल अमूर्त मन देव या दानव होता है, जब मन स्थूल (शरीर) वस्तुओं के साथ उत्पन्न होता है, तो वह स्थूल और सूक्ष्म (अमूर्त या विचार) दोनों का सम्मिश्रण होता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

प्राणी का स्थूल शरीर मरता है, उसीके साथ मन भी विलीन हो जाता है। इसी अर्थ में मनुष्य को मरणशील प्राणी कहा जाता है। इस प्रकार मनुष्य देव प्रवृत्ति तथा दानव प्रवृत्ति दोनों का मध्यमान होता है। इस दो पैरों के प्राणी को मनुष्य इसलिये कहा जाता है, क्योंकि सम्पूर्ण पशुओं/जीवों में इसीका मन प्रबल होता है।[1] मन के साथ इसके पास हाथों के रूप में क्रियाशक्ति भी नैसर्गिक रूप में प्राप्त है।[2]

लोक राज्य मुख्य रूप से मनुष्यों का संगठन होता है। इसका मुख्य कर्तव्य अपने लोगों का हित करना होता है। इसके लिये मानव राज्य को ऐसी प्रणाली (आर्थिक, संवैधानिक या यांत्रिकी) अपनानी होती है, जो मनुष्य के भौतिक (शारीरिक) और अध्यात्मिक (मानसिक, आत्मिक) क्रिया कलापों में समन्वय उत्पन्न कर सके। यदि मनुष्य समाज या राज्य में सबके साथ समन्वय (मध्यम मार्ग) का व्यवहार नहीं होता है, तो वह मानवों का राज्य न होकर दैत्यों का राज्य बन जाता है। इस राज्य में मनुष्य नाम के प्राणियों का मन (प्रवृत्ति) प्रत्येक क्षेत्र में दैत्य-मन या प्रवृत्तियों के अतिवाद में परिवर्तित हो जाता है।[3] पुराण और महाभारत में असुर या दैत्यों का मनुष्यों के रूप में जन्म लेना बताया गया है।[4] इसीको आचार्य शंकर ने अपने गीता भाष्य (4/13) में चातुवर्ण की अवधारणा को 'मानुष' लोक में प्रतिफलित होने वाला कहा है, क्योंकि लोक में तो सभी

---

1. जो सोच-विचारकर कार्य करते हैं या जिनका मन प्रबल होता है, मनुष्य कहे जाते हैं - निरुक्त (3/2/1)। मन एवं मनुष्याणां (मन को धारण करने वाला ही मनुष्य है) - (मैत्रायणी उप. 4.11)।
2. महाभा. शां. प. (180.11; 12-19) - काश्यप इन्द्र संवाद।
3. दैत्यों की उत्पत्ति उनके मन (दैमन Daimon) के बारे में देखें - "अध्यात्म, विज्ञान, राजयोग=स्वराज्य, ले. हरिदत्त शर्मा, पृ. 91-93; 104-108।
4. महाभारत, आदि पर्व - अध्याय 67।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मनुष्य चारों वर्णों से युक्त होते हैं। अतः लोक में देव, दानव की पहचान उनकी मानसिक वृत्तियों और कार्यों के आधार पर की जाती है। जिसे 'गला काट प्रतियोगिता' कहा जाता है, वही दैत्य प्रवृत्ति या मन है। आज इसे पूरे विश्व में सभी देख सकते हैं। अतः यह कहने में हमें संकोच नहीं करना चाहिये कि आज विद्वानों, संतों, मनीषियों, वैज्ञानिकों, अर्थशास्त्रियों, राजनीतिक शक्तियों एवं न्यायविदों आदि सबने दैत्यों की परंपरा को बढ़ाने के लिये ही मनुष्य रूप में जन्म लिया है। मनुष्य तो वे लोग हैं, जिनसे असुरों ने जीवन यात्रा के सभी साधन छीनकर उन्हें तिल-तिलकर मरने के लिये मृत्यु की दाढ़ों में रख दिया है और ये दैत्य स्वयं के विकास के अट्टहास पर फूले नहीं समाते हैं। इसी स्थिति को 'रावण रथी विरथ रघुवीरा' कहा जाता है। महाभारत में अधिकांश प्रौद्योगिकी असुर पक्ष (दुर्योधन) की ओर थी, परन्तु देव पक्ष की ही विजय हुई। दुर्योधन का अर्थ ही है, दुरभिसंधि द्वारा जो धन-संपत्ति का अर्जन करता है, वह दुर्योधन है। वर्तमान में विश्वभर के दुर्योधनों पर एक नजर डालें, तो ज्ञात हो जायेगा कि ये दुर्योधन परिष्कृत प्रौद्योगिकी के पाँसों की दुरभिसंधि के आधार पर ही विश्व के 80 से 90 प्रतिशत मनुष्यों के जीवित रहने के साधनों को अपने असुर स्वभाव के अनुरूप छीन ले रहे हैं। यदि ये मनुष्य प्रवृत्ति में दीक्षित होते तो इन्हें उसके महत्त्व का ज्ञान होता। इन्हें असुर मन के अनुरूप दीक्षा दी गई है, इसी कारण विश्वभर में आज सर्वत्र त्राहि-त्राहि मची है। यह भी कलियुग का ही लक्षण है।

23. शरीर-राज्य और लोक-राज्य में समानता - विश्व की किसी भी शास्त्रीय पुस्तक (धर्म-ग्रन्थ) को देखें, उनमें राजा के अनेक नाम मिलते हैं। राजा का अर्थ सुव्यवस्था और शासन होता है, इसी में नियमों के उल्लंघनकर्ता को दण्डित करना भी समाहित है। वेद, उपनिषद, पुराण, महाभारत आदि में कहा गया है कि जीवधारियों को शरीर यांत्रिकी में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अनेकों प्रकार के कौशल से बांधा गया है ।[1] अनेकानेक प्रकार के जीवों और यांत्रिकी का इस प्रकार संयोजन (योग) स्वयं प्रकृति ने किया है कि वे सभी एक माला की तरह एक धागे में मणियों के रूप में गूंथ लिये जाते हैं, यही बंधन है ।[2] इस प्रकार संघबद्ध होकर शरीर यांत्रिकी या राज्य कार्य करता है और अपने भीतर बंधन में पड़े जीवों के योगक्षेम (रंजन) के लिये शरीर यांत्रिकी का मन बाहर से भोजन की प्राप्ति, स्थूल शरीर के माध्यम से करता है । शरीर में इन बंधनों को इन्द्रजाल या वरुण का पाश कहा जाता है । शरीर में जो जीव (सूक्ष्म जीवाणु, रक्त कण आदि) होते हैं, वे इन्हीं पाशों में बंधे होते हैं । अतः इनके भोजन आदि की व्यवस्था करना स्थूल शरीर का कर्तव्य या धर्म है । शरीर स्थित जीव उसी प्रकार स्वयं को बंधन से मुक्त नहीं कर सकते हैं, जैसे मनुष्य लोक में रस्सी से बंधे पशु । ऐसे में इन पशुओं को चारा देना उसके स्वामी का कर्तव्य बनता है । ठीक इसी प्रकार जब 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' के आधार पर लोक राज्य बनता है, तो उसमें भी 'सर्व-सुख' की भावना और नियमों के बंधनों के भीतर लोक राज्य के मनुष्यों को रहना होता है । उसे अनेकानेक नैतिक और विधिक मर्यादाओं के भीतर रहना होता है । लोक राज्य में मर्यादा ही 'पाश' या 'जाल' है । इन्हीं को नियम कहते हैं । यदि इनसे मुक्ति का प्रयास किया जाता है, तो अराजकता का ताण्डव प्रारंभ हो जाता है । अतः राज्य के नियमों में बद्ध व्यक्तियों की जीवनयात्रा के साधनों को देने का कर्तव्य लोक राज्य का है, ठीक वैसे ही जैसे शरीर-राज्य में स्थूल शरीर का कर्तव्य है ।

---

1. जीव स्वतंत्र नहीं है, वह धागे में बंधे पापी की तरह कर्म के बंधन से बंधा होने के कारण परतंत्र है (महाभारत वनपर्व 30/25) ।
2. मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव (गीता 7/7) - सम्पूर्ण विश्व को मैंने (कृष्ण) धागे में माला के दानों की तरह पिरो रखा है । तात्पर्य है कि विश्व को मैंने एक व्यवस्थित यांत्रिकी में पिरो कर रखा है, अर्थात् सब कुछ एक दूसरे से संबंधित है ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इस तरह प्रकृति या ईश्वरीय राज्य और लोक राज्य में सैद्धान्तिक समानता है।

लोक राज्य में व्यक्ति या व्यक्ति समूह (people) स्वतंत्र रूप से स्वयं की जीविका उत्पन्न करता है, तो उसको आज की जटिल स्थितियों में गिरोहों और आततताइयों का साथ देना पड़ता है अथवा स्वयं ही ऐसी शक्ति का स्वामी बन जाय कि दूसरे के हिस्से को छीनकर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करता रहे। इस स्थिति में भी कोई निश्चिन्त नहीं रहता है। उसे या तो राजनीतिक गिरोह हाथों-हाथ लपककर अपना अंग बना लेते हैं या वह अन्य प्रतिद्वन्दी गिरोहों में मिल जाता है।

गिरोह शब्द गिरह (गृह) अर्थात् जहां धन-संपत्ति होती है, से व्युत्पन्न है। इस अर्थ से गिरहकट (चोर, डाकू, क्रूर) बनता है। जब वे गिरहकट सामूहिक रूप से लूट, चोरी, डकैती, हत्या आदि करने लगते हैं और इन्हें सरकारी संरक्षण प्राप्त रहता है, तो यही 'गिरोह' कहलाता है। अर्थात् 'माफिया' जो सिसली (इटली) से आयतित शब्द है। 'माफिया' और 'गिरोह' दोनों समानार्थक शब्द हैं।[1]

स्वतंत्र भारत में जिन्हें राजनीतिक दल कहा जाता है व्यवहार में वे 'गिरोहबंदी' से स्वयं को मुक्त नहीं रख सके हैं। इन्हीं राजनीतिक गिरोहों ने परस्पर एक दूसरे की टांग खींचकर राष्ट्र एवं जनता के विकास की सही दिशा को अवरुद्ध कर उसे अराजकता, लूट, दुष्कर्म, हत्यां, चोरी, डकैती, भुखमरी आदि के माफियाराज में बदल दिया है। लोकतंत्र में मर्यादा का अत्यधिक महत्त्व होता है, जब शासक ही मर्यादा का उल्लंघन करता है, तो जनता अपने हितों की पूर्ति करने के लिये उसका साथ देने को विवश हो

---

1. माफिया वे हैं, जिन्हें लूट, हत्या, डकैती, आदि की 'माफी' सरकार से पहले ही मिली होती है। देखें-अध्यात्म, विज्ञान, राजयोग स्वराज, ले0 हरिदत्त शर्मा (संलग्नक - 2)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जाती है अथवा जनता के लिये ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी जाती है कि उसीके मार्ग पर चलने के लिये विवश होना पड़ता है, क्योंकि सत्ताधारी गिरोह जनता को जीवित रहने के साधनों को देते ही नहीं हैं।

इस विवेचन का सार है कि जिस प्रकार शरीर राज्य में ईश्वरीय राजा (शासन-प्रशासन का अधिपति) सबको समान रूप से जीवन-यापन के साधन देता है, ठीक उसी प्रकार लोक राज्यों के शासकों को भी जन-जन को जीवन यापन के साधन उपलब्ध कराना उसका कर्तव्य या धर्म है। यदि लोक राज्य में ऐसे कानून बनाये जाते हैं, जिससे जीवित रहने के साधन कुछ ही व्यक्तियों तक सीमित हो जाते हैं, तो वहाँ सदा अराजकता अनेक रूपों में व्याप्त रहती है। उसे मनुष्यों का नहीं दानवों का राज्य कहा जाता है। आज के राज्य कानून के नाम पर सारा अत्याचार करते हैं। इन सम्पूर्ण समस्याओं का समाधान तभी हो सकता है जब हम 'अध्यात्म' के ज्ञान-विज्ञान को जान लें। अन्यथा हम लोग वर्तमान क्रूर, मानसिक प्रताड़ना देने वाले दैत्य राज्यों और शासनों में मानव राज्य और मानवीय शासक होने का भ्रम पालते रहेंगे और समस्या का समाधान कभी न हो सकेगा। जब तक अन्धे हमारे मार्गदर्शक इसी तरह बने रहेंगे और त्रिशिरा तथा धृतराष्ट्र की तरह के शासनतंत्र राज्य के साधन अपनों को ही देते रहेंगे, तब तक जिस स्वराज की कल्पना हम करते हैं, वह कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता है। इन स्थितियों में गिरोह तंत्र ही प्रभावी होते हैं, इसे जनतंत्र[1] कहना भी एक भ्रम ही है।

जब तक विश्व के लोक राज्यों में नियम-कानून शास्त्रीय यम-नियमों के अनुरूप नहीं बनते हैं, तब तक अध्यात्म, शांति, जनतंत्र और स्वराज का अवतरण सम्भव नहीं है। किसीको भी ऐसे वाक्वीरों (धूर्तों) के मायाजाल में नहीं फँसना चाहिये।

---

1. आज का जनतंत्र यथार्थ में demo दीमो (दीमक) + cracy तंत्र = दीमकतंत्र है। देखें - अध्यात्म, विज्ञान, राजयोग = स्वराज, ले. हरिदत्त शर्मा, पृ. 62; 94।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

24. कलियुग (हाईटेक) के शासक – जो लोग टेक्नोलॉजी या यांत्रिकी अथवा प्रौद्योगिकी के अनियंत्रित प्रयोग के दुष्परिणामों से अनभिज्ञ हैं, ऐसे प्रबुद्ध लोगों को पुराणों में वर्णित 'कल' (यांत्रिकी) के उत्पाद, विकिरण, मानसिक त्रास अर्थात् 'कलियुग' के वर्णन को श्रीमद्भागवत् (12/1/40-43) में अवश्य देखना चाहिये।

शुकदेव परीक्षित से कहते हैं-"..... कलियुग में सबके सब शासक आचार-विचार में म्लेच्छों[1] की तरह होंगे। ये सब एक समय भिन्न-भिन्न प्रान्तों में राज्य करेंगे। ये सब परम झूठे, अधार्मिक और स्वल्प दान करने वाले होंगे। छोटी-छोटी बातों को लेकर ही ये क्रोध से लाल-पीले हो जायेंगे। ये दुष्ट लोग स्त्री, बच्चों, गौओं[2], ब्राह्मणों[3] को मारने में नहीं हिचकेंगे। दूसरी ओर धन हड़प लेने के लिये सदा उत्सुक रहेंगे।...

इनमें परंपरागत संस्कार नहीं होंगे। ये अपने कर्तव्य-कर्म का पालन नहीं करेंगे। रजोगुण और तमोगुण[4] से अन्धे बने रहेंगे। शासक के वेश में वे म्लेच्छ ही होंगे। वे लूट-खसोटकर अपनी प्रजा का रक्त चूसेंगे। जब ऐसे लोगों का शासन होगा तो देश की प्रजा में भी वैसे ही स्वभाव,

---

1. म्लेच्छ का रूढ़ अर्थ शास्त्रों में नहीं लगाया जाता है। यहाँ मलिन इच्छा रखने वाले मनुष्य को म्लेच्छ कहा जाता है। मलिन इच्छा का अर्थ होता है - झूठा आचरण, लूट, हत्या, डकैती, दुष्कर्म आदि।
2. शास्त्रों में गौ का अर्थ होता है 'पर्यावरण', जो प्राणी मात्र की गाय कही जाती है। इसी अर्थ में 'गो' को 'पृथ्वी' भी कहा जाता है। पर्यावरण, खनिज संपदा का अन्धाधुंध शोषण ही गो-हत्या है, जो पृथ्वी (गो) के संतुलन को नष्ट कर देता है।
3. ब्राह्मण का अर्थ ऊर्जा (अग्नि) होता है। ब्रह्म-हत्या का अर्थ, दूसरे की वृत्तियों को छीन लेना है। जीवन रक्षा के आश्यक साधन ही 'ब्राह्मण' कहे जाते हैं। शास्त्रों में कहे गये सभी प्रकार के गुण और कार्य इन्हीं से प्राप्त होते हैं, जैसे 'अन्नं ब्रह्मा'।
4. तमोगुण अति मशीनीकरण से उत्पन्न गति और उससे उत्पन्न विकिरण (विष) है, जो मानव मस्तिष्क की सोच-विचार-शक्ति को इन दोनों (गति और विष) से विचलित कर मर्यादा और नैतिकता के बंधनों से मुक्तकर यांत्रिकी का ही अंग बनाकर उन्हें अमानवीय बना देता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आचरण और झूठे भाषणों में वृद्धि हो जायेगी। शासक उनका शोषण करेंगे, आपस में भी एक दूसरे को उत्पीड़ित करेंगे।"

श्रीमद्भागवत् के इसी बारहवें स्कन्ध के द्वितीय अध्याय में कलियुग (हाईटेक) का वर्णन इस प्रकार किया गया है -

"समय बड़ा बलवान है, ज्यों-ज्यों घोर कलियुग आता जाएगा, त्यों-त्यों उत्तरोत्तर धर्म, सत्य, पवित्रता, क्षमा, दया, आयु, बल और स्मरणशक्ति का लोप होता जायेगा। कलियुग में जिनके पास धन होगा, उसीको लोग कुलीन, सदाचारी और सद्गुणी मानेंगे। जिसके हाथ में शक्ति (सत्ता) होगी, वही धर्म और न्याय की व्यवस्था अपने अनुकूल करा लेगा।... जो जितना छल-कपट करेगा, वह उतना ही व्यवहार-कुशल माना जायेगा। स्त्री और पुरुष की श्रेष्ठता का आधार उनका शील संयम न होकर केवल रति कौशल ही रह जायेगा। जो घूस देने या धन खर्च करने में असमर्थ होगा, उसे न्यायालयों से न्याय नहीं मिलेगा। जो जितना बड़ा बाचाल होगा उसे उतना बड़ा पंडित माना जायेगा। असाधुता की एक ही पहचान होगी - गरीब होना। जो जितना अधिक दंभ पाखण्ड कर सकेगा, उसे उतना ही बड़ा साधु समझा जायेगा। इस प्रकार जब सारी पृथ्वी पर दुष्टों का बोलबाला हो जायेगा, तब राजा होने को कोई नियम न रहेगा। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्रों में जो बली होगा, वही सत्ता प्राप्त कर लेगा। उस समय नीच राजा अत्यन्त निर्दयी एवं क्रूर होंगे, लोभी तो इतने होंगे कि उनमें और लुटेरों में कोई अन्तर नहीं रह जायेगा। वे प्रजा का धन और पत्नियों को छीन लेंगे। ...." (श्रीमद्भागवत् 12/2/1-9)।

कलियुग में शासकों के मध्य जो भयंकर अमर्यादित मारामारी, उठापटक और क्रूरतापूर्ण कथित 'रणनीति' का सहारा लिया जाता है, उसका वर्णन भी श्रीमद्भागवत् में किया गया है। उसकी भी एक झलक देख लेना उचित होगा। इससे हमें वर्तमान समय की स्थिति का भी भली-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भाँति ज्ञान हो जायेगा।

शुकदेव राजा परीक्षित से कहते हैं - "जब पृथ्वी देखती है कि शासक मुझ पर विजय प्राप्त करने के लिये उतावले हो रहे हैं, तब वह कहती है - 'कितने आश्चर्य की बात है कि ये राजा लोग, जो स्वयं मौत के खिलौने हैं, मुझे जीतना चाहते हैं। .... जिनके मन में यह बात घर कर गई हो कि यह पृथ्वी मेरी है, उन दुष्टों के राज्य में मेरे लिये पिता-पुत्र और भाई भी लड़ जाते हैं।' .... जिस समय झूठ-कपट, तन्द्रा-निद्रा, हिंसा-विषाद, शोक-मोह, भय और दीनता की प्रधानता हो, उसे तमोगुण प्रधान कलियुग समझना चाहिये। .... पाखण्डी लोग अपने नये-नये मत चलाकर मनमाने ढंग से वेदों का तात्पर्य निकालने लगते हैं। शासक (राजा) कहलाने वाले लोग प्रजा की सारी कमाई हड़पकर उन्हें चूसने लगते हैं। ब्राह्मण नामधारी जीव पेट भरने और जननेन्द्रिय को तृप्त करने में ही लग जाते हैं। ब्रह्मचारी ब्रह्मचर्य व्रत से रहित और अपवित्र रहने लगते हैं। गृहस्थ दूसरों को भिक्षा देने के बदले स्वयं भीख मांगने लगते हैं। वानप्रस्थी गांवों में बसने लगते हैं और सन्यासी, धन के अत्यन्त लोभी-अर्थ पिशाच हो जाते हैं। (श्रीमद्भागवत् 12/3/1-33)।

25. कलियुग का टेक्नी स्वरूप - यहाँ पर स्पष्ट कर दें कि 'टेक्नी' का अर्थ टेक्नोलॉजी (यांत्रिकी) के स्थूल ढांचे और उसके क्रियात्मक स्वरूप से है। 'टेक्नी' (techni) या 'टेकनी' (tekani) शब्द भारत की अधिकांश भाषाओं में अंग्रेजी आने के पूर्व से प्रचलन में है। टेकनी या टेक्नी का अर्थ लाठी, टेक, शाखा, लग्गी, बहंगी, छड़ी, कुटी या भवन के टेक (स्तम्भ, खम्भे) आदि सभी कुछ हैं। विस्तार में न जाकर हम देखते हैं कि 'टेक्नी' में ही सम्पूर्ण विज्ञान और आधुनिक 'टेक्नोलॉजी' भरी हुई है। टेक्नी या टेकनी का मूल स्वरूप हमें प्राणियों के शरीर यांत्रिकी में मिलता है। इसी टेकनी की टेक्नी (कौशल) से प्राणी का शरीर बना हुआ

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है। यही टेकनी का शास्त्रीय अर्थ लिया जाता है। शाखा या वृक्ष को ही टेकनी कहा जाता है, इसी की टेक्नी (कौशल) से प्रणियों की शरीर टेक्नोलॉजी बनती है। यही प्राणियों का टेक (सहारा) होती है। इसी को टेक-टेककर प्राणी चलता है अर्थात् बल एवं पोषण प्राप्त करता है, इसीलिये उसे 'टेक्नी' कहा जाता है। वृक्ष की ही टेकनी (लाठी) बनती है और उसीसे धरन, शहतीर, स्तम्भ आदि बनते हैं। इसी टेकनी/टेक्नी में चेतना, मन और बुद्धि आदि भरी होती है। यह टेकनी प्राणी के शरीर में आहार के रूप में प्रविष्ट करती है, तो यह शंरीर का अरा हो जाती है। इसी अरे (टेक्नी) के सहारे सम्पूर्ण प्राणी शरीर की टेक्नोलॉजी क्रियाशील होती है। अतः आज के टेक्नोलॉजिस्ट हमारे प्राचीन ज्ञान का उपहास करने से बचें। हमारे शास्त्रों का ज्ञान अगाध है, यह तो केवल झलक भर है।

26. हाई-टेक (कलियुग) की भविष्यवाणी का सच - शास्त्रों में कलियुग का जैसा वर्णन किया गया है, उसे पहले ही दे दिया गया है। उसे आज हम सर्वत्र देख सकते हैं। सम्पूर्ण विश्व में कलियुग का प्रभाव छा गया है। कलियुग के इस विश्वव्यापी स्वरूप का वर्णन श्रीमद्भागवत् में दिया गया है। महाभारत और अन्य पुराणों में भी कलियुग अर्थात् हाईटेक की भविष्यवाणी दी गयी है। जो वर्णन शास्त्रों में किया जाता है, आज तो उससे भी भयावह और घृणित स्थिति हो गई है। विज्ञान नामधारी जीव इस स्थिति पर मौन साध लेते हैं। उन्हें लगता है यह कपोल कल्पना है, क्योंकि पुराणों में इस कलियुग का वर्णन 'भविष्य में होगा' कहा गया है। मानसिक रूप से हमें लगता है, यह स्थिति अभी नहीं आई है। जब भी आयेगी भविष्य में आयेगी। अतः हम स्वयं को कलियुग के बाहर होने की कल्पना कर अपना मन समझा लेते हैं। यथार्थ में यह कथन शरीर यांत्रिकी के चार खण्डों से सम्बन्धित है। जब द्वापर की समाप्ति होकर कलियुग के प्रारंभिक लक्षण आने लगते हैं, तो उसी काल खण्ड में शुकदेव ने राजा

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परीक्षित से आने वाले अर्थात् भविष्य के काल खण्ड का वर्णन किया है। यही कारण है कि हम अब भी उसे भविष्य में आयेगा मानकर चलते हैं और पुराणों की सत्यता को देख नहीं पाते हैं। जबकि शरीर-राज्य में एक दिन में कलियुग के अनेकों चक्र पूरे हो जाते हैं।

शरीर-ब्रह्माण्ड का विज्ञान इतना सहज और सरल नहीं है जितना आज के वैज्ञानिक समझते हैं। यदि यह सरल होता तो वेद 'नेति-नेति' का उद्घोष करते ही नहीं।

पहले एक ही वेद था, उसे महर्षि व्यास ने चार भागों में व्यवस्थित किया। इन्हीं चार भागों को ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद कहा गया। इसका सामान्य अर्थ नहीं है। इसके अर्थ हैं - शरीर-ब्रह्माण्ड की पहले एक विराट् टेक्नोलॉजी या यांत्रिकी थी। जब यह यांत्रिकी क्रिया करने को उद्यत होती है तो यह स्वयं को चार भागों अर्थात् चार भिन्न-भिन्न यांत्रिकी में विभाजित कर लेती है। इन्हीं चार भागों को चार वेद कहते हैं। वेद का अर्थ 'ज्ञान' है अतः जो इन चारों वेदों के सैद्धान्तिक एवं क्रियात्मक दोनों स्वरूपों को जानता है, उसको ज्ञान-विज्ञान संपन्न कहा जाता है।

27. चार वेदों की टेक्नोलॉजी का रहस्य - सृष्टि का अर्थ विस्तार होता है, यही अर्थ 'व्यास' का भी है। स्पष्ट है कि शरीर-ब्रह्माण्ड का एकात्मक स्वरूप अपनी विस्तार-प्रवृत्ति के अनुरूप स्वतः स्वयं को चार भागों (वेदों) में विभाजित कर लेती है। चार भागों में शरीर यांत्रिकी के विभाजन का रहस्य महाभारत में दिया गया है।

महाभारत, अनुशासन पर्व (दानधर्म पर्व), अध्याय 141 में कहा गया है - यदि सारा जगत् एक ही वर्ण का होता, तो सब एक साथ ही नष्ट हो जाता। इसलिये विधाता ने चार वर्ण बनाये हैं (दक्षिणात्य पाठ)।

विष्णु पुराण में चार वर्णों की रचना का कारण शरीर यांत्रिकी द्वारा मनुष्यों को स्वर्ग और अपवर्ग प्राप्ति कराने के उद्देश्य से ब्रह्मा ने की है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

यज्ञ अर्थात् क्रिया को एक पद्धति में रखकर मनुष्यों को स्वर्ग जैसे सुख (ईश्वर साक्षात्कार) तथा क्रिया को पूर्णता देने, पुनर्जन्म और मोक्ष (अपवर्ग) प्राप्ति के साधन के रूप में चातुवर्ण्य की टेक्नोलॉजी की रचना ब्रह्मा अर्थात् स्वयं ईश्वर ने की है। (विष्णु पुराण 1/6/7-10)।

इससे स्पष्ट है कि यह चार वर्णों की टेक्नोलॉजी मनुष्य सहित प्रत्येक प्राणी के शरीर में है। वह इसके माध्यम से लौकिक साधनों को प्राप्त कर सकता है जिससे उसे चारों पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) प्राप्त होते हैं। चार खण्डों की यह शरीर यांत्रिकी 'मन' को प्रभावित करती है तथा मन शरीर के इन चारों वर्णों अर्थात् मानसिक आवेगों के उत्पादों के अनुरूप क्रिया करता है। इसी कारण गीता भाष्य में शंकराचार्य ने चार वर्णों की प्रणाली को 'मानुष लोक' से सम्बद्ध बताया है। क्या आज के टेक्नोक्रेट ब्रह्मा की इस टेक्नीक से परिचित हैं?

शरीर-ब्रह्माण्ड यांत्रिकी को चार भागों (एक वेद को चार वेदों) में विभाजित होने में ईश्वरीय कौशल ही कारण है। क्यों ऐसा होता है - यह एक गहन विषय है। यह विभाजन सभी प्राणियों में होता है। अतः यह विभाजन या वेद शाश्वत एवं सर्वव्यापी है। किसने विभाजन की इस प्रवृत्ति को बनाया? किस कारण से यह विभाजन होता है? इसे कौन बता सकता है? वेद ऐसा ही कहते हैं।

वैज्ञानिक अवश्य कहेंगे कि शरीर में स्थित रसायनों और ग्रन्थियों के रसस्त्राव के कारण व्यास (विस्तार) की प्रवृत्ति बनती है, यदि इन रसायनों को निष्क्रिय कर दिया जाय तो 'व्यास' सत्ता का अंत हो जायेगा। विज्ञान जी! जब ऐसा हो जायेगा तो आप स्वयं अपना विकास कैसे कर पायेंगे, क्योंकि विकास ही 'व्यास' भी है। सूर्य की विस्तार प्रवृत्ति या स्वभाव को आप कैसे नियंत्रित करेंगे? पृथ्वी और अन्य ग्रहों तथा महाब्रह्माण्ड की व्यास प्रवृत्ति को कैसे रोक देंगे? यदि यह 'व्यास ॠषि' न

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रहेंगे तो यह ब्रह्माण्ड ही नहीं रहेगा, क्योंकि इसी व्यास वृत्ति से ग्रहों में आकर्षण-विकर्षण (गुरुत्वाकर्षण) की शक्ति उत्पन्न होती है । जब ब्रह्माण्ड ही नहीं रहेगा तो हमारे वैज्ञानिक और टेक्नोक्रेट कहाँ रहेंगे? सबसे बड़ी बात कि जनता से स्वर्ग ले आने का झूठा वादा करने वाले विश्व के राजनेता तब कहाँ से उत्पन्न होंगे?

28. व्यासावतार-वामनावतार का विज्ञान - विज्ञान तो अनन्त है। एक ओर 'व्यासावतार' है तो दूसरी ओर 'वामनावतार' है । यह विस्तार की विपरीत प्रवृत्ति या स्वभाव है । आप पुराणों के वामनावतार को कपोल कल्पना कहकर भाग नहीं सकते हैं । इसको विस्तार (व्यास) का मूल स्वरूप में 'लय' होना भी कहते हैं । जितने भी ग्रह, सौर मंडल आदि हैं, वे सभी अनन्त विस्तार (व्यास) स्वरूप के वामनावतार ही हैं । वेदों, उपनिषदों एवं पुराणों के ऐसे ज्ञान-विज्ञान से क्या आज के वैज्ञानिक परिचित हैं ?

श्रीमद्भगवद् गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने वैदिक टेक्नोलॉजी को चार भागों में सृजित करने की घोषणा करते हुए कहा है - चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टा गुण कर्म विभागशः । महर्षि व्यास श्रीकृष्ण की ही व्यास प्रवृत्ति हैं । इसीलिये उन्हें श्रीकृष्णद्वैपायन भी कहा जाता है ।

'व्यास' और 'वामन' विज्ञान के ही स्वरूप हैं । दूसरे शब्दों में ये दोनों प्रवृत्तियाँ सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के स्वभाव का अंग है जिसे 'ब्रह्माण्ड' का 'मन' कहा जाता है । ब्रह्माण्ड की प्रवृत्तियाँ सर्वत्र व्याप्त रहती हैं । इसका अर्थ है, ये प्रवृत्तियाँ स्थूल यांत्रिकी से लेकर अणु, परमाणु से भी सूक्ष्मतर पदार्थों में होती हैं । इन प्रवृत्तियों या पदार्थ के 'मन' को किसने बनाया? क्यों बनाया? इसका उत्तर कोई भी वैज्ञानिक कैसे दे सकता है? पदार्थ की इन प्रवृत्तियों को विचार, ऊर्जा या इनर्जी भी कहा जाता है । पदार्थ या द्रव्य-विस्तार के जन्मजात स्वभाव को ही गीता में भगवान कृष्ण ने 'गुणा-गुणेषु वर्तन्ते' कहा है । **इसका वैज्ञानिक अर्थ है - पदार्थ में जो क्वार्क,**

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

फोटोन, आयन्स, इलेक्ट्रान (गुण) हैं, वे ही दूसरे पदार्थ के गुणों से संयुक्त होकर सृष्टि का विस्तार करते हैं। आत्मा (मूल द्रव्य) इनके व्यापार से अलग या निर्लिप्त रहता है। पदार्थ विज्ञानी यहाँ पर भौतिक विज्ञान और रासायनिक विज्ञान तथा अध्यात्म के भेद को समझ सकते हैं। मानव निर्मित यांत्रिकी का स्वभाव निर्लिप्त होता है जबकि अध्यात्म यांत्रिकी में सगुण और निर्गुण (निर्लिप्त) दोनों स्वभाव एक साथ क्रियाशील होते हैं।

सगुण में विस्तार होता है तथा निर्गुण में संकुचन। शास्त्रों में इन तीन स्थितियों - सगुण, निर्गुण और निर्लिप्त का वर्णन एक साथ वैज्ञानिक एवं दार्शनिक ढंग से किया गया है - "अन्नं ब्रह्मा, रसो विष्णु भोक्ता देवो महेश्वरः"। यहाँ पर अन्न ही ब्रह्मा अर्थात् निर्लिप्त स्वभाव का मूल द्रव्य है, रस स्वरूप विष्णु विस्तार (व्यास या सगुण) प्रवृत्ति से युक्त है, तथा महेश्वर निर्गुण या संकुचन (वामन) प्रवृत्ति को धारण करते हैं।

29. नियंत्रित यांत्रिकी की आवश्यकता - ये तीनों सत्ताएँ एक ही द्रव्य (ब्रह्मा) में निहित तीन शक्तियाँ हैं। गुण और कर्म के आधार पर इनके नाम भिन्न-भिन्न हो जाते हैं। शरीर की टेक्नोलॉजी (यांत्रिकी) ही गुण और कर्म (क्रिया) की उत्पत्ति का आधार होती है। वेद, उपनिषद एवं पुराणों में टेक्नोलॉजी के स्थान पर 'विज्ञान' शब्द का प्रयोग किया है तथा यांत्रिकी के स्थान पर 'यंत्र' या 'यंत्र विद्या' का प्रयोग किया है। अतः शास्त्र आज की तरह के विज्ञान या टेक्नोलॉजी से अनभिज्ञ हैं, यह मानना सही नहीं है। अध्यात्म का अध्ययन करने वाले जानते हैं कि शरीर की टेक्नोलॉजी ही प्राणी के स्वभाव और प्रवृत्तियों का निर्धारण करती है। इसीलिये शरीर में चार गुणों और युगों की बात स्वीकार की जाती है। इन चारों युगों के प्रभाव भिन्न-भिन्न हैं। इसका कारण हमारी शरीर यांत्रिकी है। शरीर में जिस काल में विज्ञान 'हाईटेक' का रूप ले लेता है, उसे कलियुग कहा जाता है। इस काल में टेक्नोलॉजी के अतिरेक के कारण दैत्य या राक्षसी प्रवृत्तियों में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

वृद्धि हो जाती है और मानव अनेक प्रकार के तनावों से घिर जाता है। शास्त्रों में कलियुग के संदर्भ में इन परिस्थितियों का वर्णन किया है। शरीर राज्य में ये दुष्परिणाम उसकी हाई टेक्नोलॉजी के कारण उत्पन्न होते हैं। वहाँ इसे रोका नहीं जा सकता है।

ईश्वरीय टेक्नोलॉजी का बार-बार मनन और चिंतन करने से उसके दुष्परिणामों से कैसे मुक्ति मिल सकती है, इस पर विचार करना भी अध्यात्म है।[1] इसीको ऋषियों ने स्वाध्याय कहा है। (महाभारत शा. पर्व, 3/8/48)। शरीर की हाई टेक्नोलॉजी (कलियुग) का वैज्ञानिक अध्ययन करने के परिणाम स्वरूप ही ऋषि इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि लोक में प्रयोग की जाने वाली टेक्नोलॉजी नियंत्रित अर्थात् मध्यम स्तर की होनी चाहिये। अन्यथा हाई टेक्नोलॉजी लोक राज्य भी कलियुग के दुष्प्रभावों - चोरी, डकैती, लूट, भ्रष्टाचार, हत्या, दुष्कर्म, बेरोजगारी, अपहरण, आतंक, युद्ध और अमानवीय कृत्य आदि से अछूते न रहेंगे। ईश्वरीय यांत्रिकी (शरीर) और मानव निर्मित लौकिक यांत्रिकी का तुलनात्मक अध्ययन भी 'अध्यात्म' का एक अंग है। तुलनात्मक चिंतन के महत्व को इंगित करते हुए याज्ञवल्क्य कहते हैं -

"सांगोपांग वेद पढ़कर भी जो वेदों के द्वारा जानने योग्य परमेश्वर को नहीं जानता, वह मूढ़ केवल वेदों का बोझ ढोने वाला है।" (महाभा. शांति पर्व- मोक्षधर्म पर्व, 318/48-50;52)। आज के टेक्नोक्रेट इस विधा को जानते ही नहीं हैं। इसी कारण विश्व कलियुग (हाईटेक) के दोषों से त्राहि-त्राहि कर रहा है।

---

1. महाभारत शांतिपर्व, अध्याय 301 में बताया गया है कि शरीर-टेक्नोलॉजी का बार-बार अध्ययन कर समझना चाहिये कि वहाँ किस क्रिया का क्या परिणाम जीवों को भोगना पड़ता है, उसी निष्कर्ष के समानान्तर लोक राजयों में भी टेक्नोलॉजी के संशोधित स्वरूप को लगाया जाना चाहिये। इससे शरीर यांत्रिकी की तरह के अभिशापों से लोक में बचा जा सकता है। वैज्ञानिकों एवं टेक्नोलॉजिस्टों को इसे अवश्य पढ़ना चाहिये।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

30. सम्पूर्ण और पाखण्ड - टेक्नोक्रेट (वैज्ञानिक) एवं अध्यात्मवादी यह न सोचें कि उपर्युक्त निष्कर्ष लेखक का अपना है। यह निष्कर्ष शास्त्रों का है। यह कहा जा रहा है बार-बार कि अध्यात्म संपूर्ण के ज्ञान का 'सार' है। इस संपूर्ण में ज्ञान और विज्ञान दोनों समाहित हैं। संपूर्ण को एक साथ जानना कठिन है, इसी कारण हमारी लौकिक दृष्टि सीमित को ही अध्यात्म समझकर 'पाखण्ड' को ही अध्यात्म मान बैठी है। 'पाखण्ड' का अर्थ खण्ड-खण्ड में सच को बताना परन्तु उसका संपूर्ण विवेचन करने में असमर्थ होना है। शास्त्रों में इस स्थिति का वर्णन अन्धों द्वारा हाथी के स्वरूप को बताने के उदाहरण से किया है।

सार बात यह है कि विज्ञान, यांत्रिकी या टेक्नोलॉजी अध्यात्म का ही एक आवश्यक अंग है। उपनिषद और पुराण अध्यात्मिक यांत्रिकी को विज्ञानमय शरीर या विज्ञानमय कोश कहते हैं। देव एवं दानव प्रवृत्तियाँ शरीर यांत्रिकी का निर्माण करती हैं। यहाँ पर गंभीर प्रश्न उठता है कि मनुष्य के भौतिक लोक में भी इसी प्रकार की हाईटेक प्रणाली का विकास होना चाहिये अथवा मनुष्य की मरण धर्मिता के अनुरूप लौकिक यांत्रिकी को मध्यम या नियंत्रित होना चाहिये। ऋषियों ने इस पर गहन मंथन किया है और निष्कर्ष निकाला हैकि 'यम-नियमों' को लोक में सार्वभौमिक स्तर पर स्वीकार किया जाना चाहिये। इसका तात्पर्य होता है- लोक में सर्वत्र - यांत्रिकी, उपभोग, उत्पादन आदि में - मध्यम या नियंत्रित मार्ग अपनाना चाहिये। अतिरेक मनुष्य में दैत्य प्रवृत्तियों का निर्माण कर राज्य को "रौरव नरक" बना देता है। 'रौरव' 'रोर' अर्थात् शोर, हल्ला-गुल्ला, दौड़-भाग, यांत्रिकी से उत्पन्न विकिरण का शोर, ध्वनि प्रदूषण, अराजकता और रार से व्युत्पन्न है। जहाँ एक क्षण की भी शांति नहीं है वही 'नरक' है।

31. राक्षसों की प्रिय हाई टेक्नोलॉजी - दैत्य, यक्ष और राक्षसों को ही यह कलियुग (हाईटेक) प्रिय होता है, इस बात को महाभारत में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

रहस्यपूर्ण ढंग से कहा गया है । "महाभारत की रचना हो जाने पर देवताओं को देवर्षि नारद ने, पितरों को असित देवल ने, यक्ष और राक्षसों को शुकदेव ने और मनुष्यों को वैशम्पायन ने पहले-पहल महाभारत संहिता सुनाई ।" (स्वर्गारोहण पर्व - 5/56) । शुकदेव का अर्थ प्रिय, मीठा, अच्छा होता है । दैत्यों और राक्षसों को यह हाईटेक प्रिय (मीठी) लगती है, इसी कारण वे इसको उच्च स्तर तक ले जाते हैं । 'शुकदेव ने यक्षों और राक्षसों को महाभारत सुनाई' यही इसका विवेचन है । इसी कारण कहा जा रहा है कि शास्त्र और अध्यात्म तथा शास्त्रों के विज्ञान को समझना सरल नहीं है । इस कथन से यह निष्कर्ष निकलता है कि मनुष्य मरणशील होता है । अतः उसे दैत्यों की हाई टेक्नोलॉजी को लोक में नहीं अपनाना चाहिये ।

हाई टेक्नोलॉजी मनुष्यों को किस प्रकार राक्षसी आवेश से भर देती है, उसका विवेचन महाभारत में किया गया है - 'विश्वामित्र ने आवेश में आकर बहुत से प्रचण्ड तेजस्वी यातुधान और राक्षस रच डाले थे, जो काल और यमराज के समान भयानक थे । (महाभा. अनुशा. प., दानधर्म प. 3/4)। टेक्नोक्रेटों को महाभारत की इस हाईटेक प्रणाली को समझना होगा जो मनुष्यों को भी राक्षसी आवेश से भर देती है तथा काल (महाकाल) और यमराज (मृत्यु) का तांडव सर्वत्र प्रचारित कर देती है । कोई इसे कोरी कल्पना न समझे । आज सर्वत्र इन्हीं राक्षसी प्रवृत्तियों द्वारा काल और यमराज के भयानक कृत्यों को संपन्न किया जा रहा है । यह देन हाईटेक अर्थात् अनियंत्रित यांत्रिकी की है । इसको विश्व के वैज्ञानिक समझें । व्यासजी के कथनों को समझना कठिन है इसीलिये उन्होंने महाभारत ग्रन्थ के पहले ही कह दिया है कि - इस लेखन में जो ग्रन्थियाँ (गाठें) लगाई गई हैं, उनका अर्थ गूढ़ है । इस ग्रन्थ में 8800 ऐसे श्लोक हैं जिनके अर्थ को मैं समझता हूँ, गणेश समझते हैं, संजय समझते हैं या

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

नहीं, यह कहना कठिन है (महाभा. आदि पर्व, अनुक्रमणिका प. 1/80-82)।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जो अल्पज्ञ ग्रन्थ की गांठों को खोलने में असमर्थ हैं, वे ही स्वयं को लोक में महापंडित समझते हुए महाभारत आदि शास्त्रीय ग्रन्थों को या तो झूठ का पुलिन्दा कहते हैं या उसमें बाद के विद्वानों द्वारा मिलावट कर देने का आरोप लगाते हैं। एक कथन है – 'जन्मना जायते शूद्रः संस्कारात द्विज उच्यते'। इसका भी अर्थ विद्वान नहीं लगा पाते हैं। इसका एक अर्थ यह है - शास्त्र में नयी सृष्टि कलियुग अर्थात् राक्षसी आवेगों के साथ प्रारंभ होती है। शास्त्र का अर्थ यहाँ पर शरीर यांत्रिकी और उसकी क्रियायें हैं। शूद्र का अर्थ प्राकृत स्वभाव है, जिसमें प्राणी केवल मानसिक आवेग-संवेग (प्रवृत्ति) के द्वारा संचालित होता है। 'संस्कारात द्विज उच्चते' का अर्थ है - लोक राज्य या समाज में प्रकृति की शूद्र (राक्षसी भाव) प्रवृत्तियाँ तभी प्रभावी होती हैं जब उन्हें समाज की सामूहिक आवश्यकता के अनुरूप संशोधित या संस्कारित कर लिया जाता है अर्थात् 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' के अनुरूप; क्योंकि राज्य का भाव यहीं से प्रारंभ होता है। जो लोग शास्त्र के वचनों को बिना संस्कार के यथावत लागू कर देते हैं वे समाज को गर्म लावे की कड़ाही में डाल देते हैं। असंस्कारित पंडितों का यही कौशल आज हम विश्व में सर्वत्र देख सकते हैं। इसमें प्रमाण की क्या आवश्यकता है?

यहाँ पर हाई टेक्नोलॉजी के दुष्प्रभाव का एक और उदाहरण महाभारत से दिया जा रहा है कि यह टेक्नोलॉजी किस प्रकार मनुष्यों को राक्षस बना देती है। महाभारत आदि पर्व (चैत्ररथ पर्व) अध्याय 175 में राजा कल्माषपाद और वशिष्ठ पुत्र शक्ति दोनों ही कलियुग (हाईटेक) के उत्पाद हैं। राजा कल्माषपाद के शरीर में अत्यधिक धनात्मक बल (शक्ति के आवेग या श्राप) के प्रभाव से राक्षस प्रविष्ट हो गया अर्थात् उसकी प्रवृत्ति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राक्षसी हो गई और उसने मनुष्यों का भक्षण करना प्रारंभ कर दिया, इसका तात्पर्य होता है मानव 'मन' का नष्ट हो जाना और अतिवादी राक्षस मन का उत्पन्न हो जाना। आज जिसके पास बल है, सत्ता है और धन है - वह विश्व में 'कल्माषपाद' की तरह राक्षसी आवेश से आविष्ट होकर हिंसा आदि में लिप्त है। इसके अनेक रूप हैं। दोनों विश्व युद्ध, शीत युद्ध, कोरिया युद्ध, वियतनाम युद्ध, ईराक युद्ध, अफगानिस्तान युद्ध और आतंकवाद, अब मध्य पूर्व के अरब देशों का आतंक, राज्यों के भीतर के आतंक ये सभी विश्वव्यापी हाईटेक या सुपरटेक के उत्पाद 'कल्माषपाद' के ही राक्षसी आवेश के परिणाम हैं। कल्माषपाद का अर्थ ही होता है – 'कल' (हाईटेक यांत्रिकी) के 'माष़' (कलुषित धन, द्रव्य) के कारण उत्पन्न 'पाद' अर्थात् तीव्र गति, भागम-भाग या आवेग (आवेश)।[1] यही हाईटेक का अभिशाप है। वैज्ञानिक, राक्षस उत्पाद की इस हाई टेक्नोलॉजी (कलियुग) को समझें तभी उन्हें अध्यात्म और विज्ञान का अन्तर समझ में आयेगा। अन्यथा काल की गति को कौन रोक सकता है? सभी को एक न एक दिन इस संसार से कूच कर जाना है। कहा भी है - सबसे भले ते मूढ़ जिन्हें न व्यापहिं जगत गति।

32. विज्ञान की भाषा में कलियुग - पुनः कलियुग के वैज्ञानिक स्वरूप को स्पष्ट करते हैं। शरीर राज्य में अथर्ववेद जिसे इन्द्रजाल या जादू कहता है, इसी वैज्ञानिक कौशल का चमत्कार है। कल अर्थात् टेक्नोलॉजी या यांत्रिकी इस काल में अपने पूर्ण विकसित स्वरूप को प्राप्त कर लेती है। अनेक दुर्गुणों के बाद भी कलियुग का सबसे बड़ा लाभ यह है कि मनुष्य के सभी कार्य अल्पकाल में ही पूर्ण हो जाते हैं (विष्णु पुराण

1. हजारों वर्ष पूर्व ऋग्वेद ने हाईटेक (कलियुग) के यमराज स्वरूप की व्याख्या 'तुरश्चिद् राजा' (ऋ. 7/41/2) में की है। निरुक्त (12/2/8) में यास्क ने त्वर को त्वरा, तीव्रगति वाला चित्त बताया है जिसका अर्थ यमराज किया है। पूरे विश्व को एक साथ देखें, सबको हाईटेक की त्वरा (High speed) से उत्पन्न यमराज के दर्शन हो जायेंगे।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

6/2/15-18) । आज हम इसे लोक में भी प्रत्यक्ष देख सकते हैं । पहले हम शरीर राज्य की बात करें, तो यह कलियुग ऊपर से सप्तम् और अष्टम् चक्र में अपने पूर्ण रूप में विकसित हो जाता है ।

महाभारत का कुरुक्षेत्र स्थल यही स्थान है जहाँ विज्ञान के अति विकसित अस्त्र-शस्त्रों, नारायणस्त्र और ब्रह्मास्त्रों का प्रयोग किया जाता है । इस काल (युग) में वैज्ञानिक कौशल, अति उत्पादन, अति उपभोग और इसके परिणाम स्वरूप अति प्रदूषण और विकिरण तथा लूटपाट, मार-काट से धन संग्रह की प्रवृत्तियाँ बढ़ जाती हैं, क्योंकि अर्थव्यवस्था कृषि आधारित न रह कर यन्त्राधीन (हाईटेक) हो जाती है । यन्त्रों के तीव्र शोषण से धरती अनुत्पादक एवं अकाल की चपेट में आ जाती है । उसीको कलियुग के वर्णन में शास्त्रों ने 'अतिवृष्टि और सूखा' कहा है (महाभा. शा. प. 69/97; विष्णु पु. 6/2/52) । कृषि आधारित अर्थव्यवस्था के नष्ट हो जाने पर ऐसी ही स्थिति उत्पन्न होती है । इस काल (युग) में शरीर यांत्रिकी का सम्पूर्ण कौशल इसी कुरुक्षेत्र में एकत्र होकर क्रियाशील हो जाता है । इस एकत्रित टेक्नोलॉजी को (कव रव = कउ + रउ = कु + रु = कुरु = करने, के रव या शोर) से ही कुरुक्षेत्र शब्द व्युत्पन्न है । महाभारत में इसी 'रव' को 'कोलाहल' भी कहा गया है । कलों का यही कोलाहल प्राणियों को विचलित और भ्रमित कर देता है । इस कालखण्ड में वैज्ञानिक टेक्नोलॉजी की गति इतनी तीव्र होती है कि 'जीव' इस गति के प्रभाव क्षेत्र में आकर स्वयं के अस्तित्व की रक्षा में लग जाते हैं । परिणामतः समाज के ताने-बाने बिखर जाते हैं । जब किसीसे लगाव नहीं रह जाता है तो अथर्ववेद या पुराणों में वर्णित कलियुग का प्रत्यक्ष आगमन हो जाता है । कलियुग की स्थिति का वर्णन पूर्व में किया जा चुका है ।

33. महाभारत में विश्व युद्ध - इसी कलियुग के साथ शरीर राज्य में साधनों की प्रप्ति के लिये युद्ध, गृहयुद्ध आदि प्रारंभ हो जाते हैं ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

इसके पूर्व शरीर राज्य में जो साधनों (आहार) को भरता है, वह 'भरत' कहा गया। जो साधन भरे गये थे शरीर राज्य के सापेक्ष यही 'भारत' है। यही भारत राष्ट्र है। टेक्नोलॉजी के प्रभाव से यह युद्ध विश्वव्यापी हो जाता है, इसी कारण इसे 'महाभारत' कहा गया है। शरीर राज्य के सम्पूर्ण स्वरूप को विश्व के रूप में स्वीकारा जाता है। इसी कारण जब तक स्थानीय स्तर पर युद्ध होते रहे, ग्रन्थ को 'भारत' कहा गया (आदि पर्व 1/14), और जब इसने विश्वयुद्ध का रूप ले लिया तो इसमें 'महा' शब्द जोड़ दिया गया। तात्पर्य यह है कि शरीर राज्य में युद्ध और विनाश का एक चक्र अनिवार्य रूप में आता है, उसे रोकना किसी के वश में नहीं होता है। यह प्रकृति का विधान है। यहाँ पर कलों, (मशीनों या यन्त्रों) के कोलाहल से मति इतनी भ्रमित हो जाती है कि अच्छे-बुरे में कोई भेद नहीं रह जाता है, सम्पूर्ण व्यवस्था प्रदूषित हो जाती है, इसी कलियुग के साथ विनाश का प्रारंभ भी हो जाता है। महाभारत युद्ध के बाद दैवी प्रवृत्ति (पुर्ननिर्माण) की विजय होती है, इसलिये इस ग्रन्थ को 'जय' कहा गया है- जिस ओर कृष्ण (दैवी साधन) और अर्जुन जैसे धनुर्धर (हाई टेक्नोलॉजी) होते हैं उसी पक्ष की विजय होती है (गीता 18/75)।

आज के वैज्ञानिकों एवं टेक्नोलॉजिस्टों को बताना चाहिये कि विश्व अभी भी 'कलियुग' के ज्वालामुखी के मुख पर नहीं बैठा है? यह (उपर्युक्त) निष्कर्ष कपोल कल्पना है। यदि ये लोग 'ना' कहते हैं तो इन्हें बताना चाहिये कि 'प्रत्यक्षं किं प्रमाणम्' को कहाँ छिपायेंगे ? यदि 'हाँ' कहते हैं तो इन्हें बताना चाहिये कि इसके निवारण के उपाय क्या हैं ?

34. कल्कि अवतार टेक्नोलॉजी - महाभारत के विद्वान कल्कि का अवतार सम्भल नामक ग्राम में एक ब्राह्मण के घर में होना बताते हैं। वर्तमान सम्भल ग्राम उत्तर प्रदेश के मुरादाबाद जिले में स्थित है। पुराणों में केवल सम्भल ग्राम का संकेत है। जिला का कोई उललेख नहीं है। हमारे

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

विद्वान महाभारत और पुराणों के भूगोल को लौकिक भूगोल के साथ जोड़ते हुए अनेकानेक तर्क देते हुए दीखते हैं । उन्हें शब्दों की निरूक्ति का विज्ञान जानना चाहिये । शमं बलः = शम्भलः अथवा समं बलः सम्भल यह दो व्युत्पतियाँ संम्भल शब्द की हैं । जहाँ पर दोनों युद्धरत पक्षों के बलों का शमन् हो जाता अथवा उनमें सम (शांत, समान) स्थिति आ जाती है उसीको शंम्भल या सम्भल कहा जाता है अथवा जहाँ दोनों पक्षों के सम (समान) परस्पर विरोधी बलों से एक तीसरा बल (कल्कि) अवतरित या उत्पन्न होता हैं वह स्थान शम्भल है या सम्भल है । इतने प्रकार की व्युत्पत्ति कर देने से लोगों को भ्रम हो जाता है । शब्द की यह व्युत्पत्ति शरीर-ब्रह्माण्ड के सापेक्ष की जाती है । लौकिक आधार पर की गई व्युत्पत्ति सही नहीं होती है । पुराण, बाईबल और कुरान में भी एक शब्द की अनेक प्रकार से व्युत्पत्ति की जाती है ।

शम्भल नामक ग्राम में 'कल्कि' का अवतार होगा, ऐसी भविष्यवाणी श्रीमद्भागवत् (12/2/18) में की गई है । इस प्रसंग में कहा गया है कि कल्कि का स्वरूप धर्म की रक्षा के लिये सत्वगुण से युक्त होगा (श्रीमद्भा. 12/2/17) । यहीं पर कहा गया है कि विष्णुयश नाम के ब्राह्मण के घर 'कल्कि' का प्रदुर्भाव (अवतार, जन्म या उत्पत्ति) होगा । शास्त्रों में ब्राह्मण का अर्थ ब्रह्म के अण अर्थात् इलेक्ट्रान, फोटान या अग्नि (उष्मा) होता है । अग्नि से सम्पृक्त स्थल ही विष्णुयश नामक ब्राह्मण है । विष्णु का अर्थ द्रव्य है और इस द्रव्य के अग्नि के संयोग से जो ताप, वाष्प, गंध आदि प्रवाहित होती है, वही 'यश' कहा जाता है । यह वही ब्रह्म हैं जिन्हें शरीर के प्रथम चक्र में 'अन्नं ब्रह्मा' कहा गया था । अब 'गुणकर्म विभागशः' के अनुसार इनका स्वरूप विष्णु में परिवर्तित हो गया है । इसी विष्णुयश के शरीर के तप (ताप) और दो बलों के दबाव (युद्ध, संघर्षण, रसायनीकरण) से तरल ऊर्जा या पुत्र (कल्कि).का प्रादुर्भाव होता है । विज्ञान की भाषा में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहें तो यह 'कल्कि' कल्क में स्थित तरल ऊर्जा और उसमें स्थित जीवात्मा (जीवनी शक्ति) का नाम है । कल्क को आयुर्वेद में महीन पिसी चटनी या पिष्टि कहा जाता है ।

जब शम्भल ग्राम में 'कल' (यांत्रिकी, टेक्नी + कल) के तीव्र चालन के घात-प्रतिघात के साथ 'कल्कि' अवतार के साथ तरल ऊर्जा (जीवनी शक्ति) भी चारों ओर भ्रमण करती है तो इसी स्थिति को श्रीमद्‌भागवत् ने कल्कि भगवान का देवदत्त नामक नामक घोड़े (अश्व) पर बैठकर दुष्टों और राजाओं का वेष धारण किये, दस्यु शासकों का तलवार से संहार करना कहा है (12/2/19-20)। देवदत्त या देव प्रदत्त अश्व का अर्थ स्वचालित गति है अथवा स्वचालित यांत्रिकी भी है। यह शम्भल ग्राम शरीर-राज्य में ऊपर से सप्तम् और अष्टम् चक्र में स्थित होता है जहाँ बलों का शमन हो जाता है। लोगों को शरीर-ब्रह्माण्ड यांत्रिकी की इस जटिल व्याख्या, क्रिया और परिणति को समझना सहज नहीं है, यह बात बार-बार इसलिये कही जा रही है जिससे आज के टेक्नोलॉजिस्ट इसे समझने का प्रयास करें और कलियुग और कल्कि के व्यापक प्रभाव और महत्व को समझें। जिसे वे आज 'हाई-टेक' कह रहे हैं, वही 'कलियुग' है। गीता के 'गुण कर्म विभागशः' को एक अलग दृष्टिकोण से देखने पर कल्कि को 'नटराज' कहा गया है। एक ही यांत्रिकी द्वारा एक ही समय में विभिन्न कार्यों के सम्पादन को ही 'ऋषिर्द्रष्टा' कहा गया है। इसी अधार पर कहा जाता है कि वेद मंत्रों के निर्माता ऋषि नहीं हैं, वरन् वे केवल 'द्रष्टा' मात्र हैं। अतः आज के यंत्रविदों को कलियुग और कल्कि टेक्नोलॉजी को समझना होगा तभी वे यांत्रिकी के अध्यात्मिक प्रभाव को समझ सकेंगे ।

श्रीमद्‌भागवत् (12/2/19) में इन्हीं 'कल्कि' भगवान को अष्ट ऐश्वर्य से युक्त कहा है । ये ऐश्वर्य वही है, जिन्हें पतंजलि योग सूत्र (3/45 में) अष्टसिद्धियां कहा गया है । महर्षि पतंजलि ने इन्हें 'विभूतिपाद' में रखा है । इससे स्पष्ट है कि ये सिद्धियाँ या क्रियाशक्तियाँ सम्पूर्ण शरीर यांत्रिकी का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

संचालन करती हैं। इन्हीं आठ ऐश्वर्यों या सिद्धियों के कारण कल्कि को भगवान का अवतार कहा गया है, क्योंकि ये कलियुग के अत्याचारों का शमन करने के साथ-साथ अपने ऐश्वर्यों की शक्ति से सत्ययुग प्रवर्तन करते हुए सृष्टि चक्र की निरंतरता को बनाये रखते हैं (श्रीमद्भा. 12/2/23-34)। इस प्रकार नयी सृष्टि के साथ-साथ चार युगों (सत्ययुग, त्रेता, द्वापर ओर कलियुग) का चक्र भी चलता रहता है। इसी शाश्वत सत्य की छाया लोक राज्यों में भी पड़ती है। वर्तमान युग कलों (यांत्रिकी प्रधान) का युग है, जो चरम की ओर बढ़ता जा रहा है। कब और कैसे इसका अन्त होगा? 'कलयुग' के संस्थापक और बर्धक भी इसकी भविष्यवाणी नहीं कर सकते हैं।

आज के टेक्नोक्रेट शरीर-यांत्रिकी की क्रिया, उद्देश्य एवं उसकी क्रिया पद्धति का विश्लेषण जिस ढंग से करते हैं, अध्यात्मवादी इनके निष्कर्षों से भिन्न निष्कर्ष निकालते हैं। एक भौतिक यंत्रविद ईश्वर की शाश्वत यांत्रिकी (शरीर) में अध्यात्म को नहीं देख सकता है, परन्तु अध्यात्मवादी उसी शरीर यांत्रिकी और बाह्य जगत् की विराट् यांत्रिकी में ईश्वरीय सत्ता को देख लेता है। इन्हीं दोनों विपरीत परिणामों के बारे में गीता (4/11) में कहा है - ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्। जो जिस भाव या प्रयोजन से मुझे देखते (भजते) हैं, मैं भी उनको उसीके अनुरूप देखता हूँ अर्थात् मैं भी उनको उसी रूप में दिखाई देता हूँ।

35. हाईटेक, हाई प्रोडक्शन और हाई कन्जंप्शन - हाईटेक उच्च यांत्रिकी है, हाई प्रोडक्शन अति उत्पादन है तथा हाई कन्जंप्शन अति उपभोग या अति शोषण है। पुराणों ने 'कलियुग' में इन तीनों स्थितियों और उनके प्रभावों का वर्णन किया है। विष्णु पुराण (6/3/17-23) में कलियुग के अन्त में शरीर-राज्य में स्थित हाई टेक्नोलॉजी के दुष्प्रभावों का वर्णन करते हुए कहा गया है -

"उस समय भगवान विष्णु सूर्य की सातों किंरणों में स्थित होकर सम्पूर्ण जल को सोखकर समस्त भूमंडल को शुष्क कर देते हैं (17)। समुद्र

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

तथा सरिताओं में जितना जल है, वे उन सबको सुखा डालते हैं (19)। .... तीनों लोक पर्वत, नदी और समुद्रादि सर्वथा नीरस हो जाते हैं (22)। उस समय सम्पूर्ण त्रिलोकी के वृक्ष और जल-आदि के दग्ध हो जाने से यह पृथ्वी कछुए की पीठ की तरह कठोर हो जाती है (23)।"

यह ध्यान रहे कि यह स्थिति शरीर-राज्य की बताई गई है। लोक राज्य की स्थिति में ये घटनाएं कुछ परिवर्तनों के साथ घटित होती हैं।

36. सभी राष्ट्रों के नामों का समान अर्थ – जो अर्थ 'भारत' का है, वही अर्थ अन्य देशों के नामों का भी है। शास्त्रों के नाम 'गुण कर्म विभागशः' (गीता 4/13) के अनुरूप रखे जाते हैं। भले ही नाम रूढ़ आधार पर रखा गया हो, परन्तु जब शब्द के वैज्ञानिक स्वरूप की व्युत्पत्ति करनी होती है, तो उसकी व्युत्पत्ति 'शरीर-राज्य' के साक्षेप की जाती है। अतः सभी राष्ट्रों के नाम का समान भाव, मन्तव्य या अर्थ होता है, केवल शब्दों में भिन्नता होती है। अतः सभी राष्ट्रों के नामों की व्युत्पत्ति 'भारत' को उदाहरण मानते हुए कर ली जाय तो सबकी व्युत्पत्ति का अर्थ एक सा होगा। भारत नाम 'भरत' के नाम से पड़ा है। भरत शरीर राज्य की यांत्रिकी में निहित वह अमूर्त सत्ता है, जो सबका भरण-पोषण करती है और सबके भार (योग क्षेम) का वहन करती है।

इंग्लैण्ड अं लान द = जहाँ से अं[1] (पोषण ऊर्जा) को लाया जाता है, उसी को इंग्लैण्ड राष्ट्र कहते हैं। फ्रांस फरान् स जहाँ खेती होती है, वह फ्रांस राष्ट्र है। फलना और फरना, दोनों का एक अर्थ है (पाणिनी सूत्र) पेड़-पौधे ही फलते हैं, वहीं से सम्पूर्ण शरीर-राज्य में स्थित प्राणियों का भरण-पोषण होता है अथवा France का 'फरां कए' उच्चारण से भी फ्रांस की यही व्युत्पत्ति होती है।

1. अं का अर्थ पोषक ऊर्जा कैसे होता है? इसका उत्तर है – प्रकृति में पुष्पों में मधु (पोषक तत्त्व) होने की अभिव्यक्ति भ्रमर या मधुमक्खी 'अं – अं' शब्द से व्यक्त करती हैं। इसी आधार पर अं, अङ् या इङ् का अर्थ पोषक तत्त्व या आहार लगाया जाता है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जर्मनी जर (जल) + मनये = जो प्राणियों की मानसिक वृत्ति को मनाता है। वही जर्मनी राष्ट्र है। शास्त्र में जीव आहार से ही मनाये जाते हैं। अथवा जर-अग्नि अर्थात् पोषक तत्त्वों की प्राप्ति जहाँ से होती है वही जर्मन राष्ट्र है, इस प्रकार की व्युत्पत्ति भी की जाती है।

ईरान > ई लान > ई लयान = जहां से ई (पोषक ऊर्जा की प्राप्ति होती है वह ईरान राष्ट्र है। यमन-जहाँ मन जाता है या रहता है वही 'यमन' है। मन वहीं जाता है - या बसता है, जहाँ आहार, पोषक द्रव्य होता है, इसी आधार पर यमन की व्युत्पत्ति की गई है। ब्राजील > बड़ा झील = झील सघनवृक्ष और पादपों को कहा जाता है। झील से पानी पीते हैं। यही पोषक तत्त्व है। इसी झील में निहित ऊर्जा को 'जील' (zeal) = उत्साह या ऊर्जा कहते हैं। इस 'जील' की हिन्दी ढंग से व्युत्पत्ति करेंगे तो यह होगी - जी + याल = जी (जीवन, प्राण) का याल = रक्षक)। रूस (रूस्सा) रू = रूई, तरल द्रव्य, रस + स्सा = साना, बोना, रखना, सींचना। इस प्रकार रूस, रूस्सा या रसा का अर्थ वह स्थान है जहाँ ऊर्जा के साधन रखे होते हैं या भरे होते हैं, या उत्पन्न होते हैं अथवा उन्हें साया (बोया) जाता है, वही स्थान रूस (रसा) राष्ट्र है।

'अरब' वह आधार 'अर' है, जहाँ से सभी साधन प्राप्त होते हैं। अर + बः जहाँ स्वर्ग में प्राप्त सभी साधन होते हैं। यह व्युत्पत्ति स्वयं कुरान मजीद में है जो कुछ भी साधन स्वर्ग में होते हैं उनका वर्णन किया गया है। इसीलिये 'कुरान' को भी 'अरबी कुरान' कहा गया है। यह सार्वभौमिक अर्थ देता है। अरब = भरा-पूरा क्षेत्र + कुरान > कुलान (जहाँ से सबको सींचा जाता है अर्थात् जीवनी शक्ति मिलती है वही 'अरबी कुरान' है। इस प्रकार प्रत्येक प्राणी या मनुष्य दो प्रकार के राष्ट्रों से अपना भरण करता है, एक शरीर के बाहर की भौतिक साधनों युक्त भूमि और दूसरा शरीर के भीतर स्थिति साधनों से युक्त भण्डार। इस प्रकार विश्वभर में राष्ट्रों के जो

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भी नाम हैं, उनकी व्युत्पत्ति एक ढंग या भाव से की जाती है। 'अरब' राष्ट्र या देश की एक और व्युत्पत्ति भी देखें - संस्कृत में 'अरव' का अर्थ खाली, रिक्त या शब्दहीन होता है। 'रव' का अर्थ है, ध्वनि। ध्वनि तभी आती है जब दो बर्तन टकराते हैं। यहाँ बर्तन का अर्थ है, साधन। अतः 'अरव' का अर्थ है, 'मरुभूमि' अर्थात् भूखा पेट। इसके विपरीत 'अरब' का अर्थ है अर (भूमि) जो ब (बल) से युक्त हो, वह अरब राष्ट्र है। ब का अर्थ साधन, आहार, अन्न या वृक्षों से भरा स्थान है। यह सब शरीर यांत्रिकी के सापेक्ष की जा रही शब्दों की व्युत्पत्ति है। इसी कारण पहले यह बता दिया है कि अध्यात्म और उसके विज्ञान को समझना सहज नहीं है। यदि सहज होता तो अभी तक इसकी कुंजी खुल चुकी होती। अब 'चीन' देश की व्युत्पत्ति देखें - 'चीन' चिन् या चिण् शब्द से व्युत्पन्न है। इसका अर्थ चिनना, भरना, रिक्त (अभाव) को भरना अर्थात् उसे स्वस्थ बनाना है। अतः जहाँ से शरीर के अभाव को भरा या चिना जाता है वह राष्ट्र 'चीन' कहलाता है। इसी प्रकार अन्य देशों के नामों की व्युत्पत्ति की जाती है।

37. कृष्ण की रासलीला का विज्ञान और संयुक्त राष्ट्र – यहाँ पर हमें विभिन्न भाषाओं की लिपि पर नहीं वरन् उनके उच्चारण पर ध्यान देना होता है। भिन्न-भिन्न लिपियों (संकेतों) के कारण ही हम भ्रम में पड़ जाते हैं कि अमुक भाषा अमुक भाषा से भिन्न है। जब हम किसी शब्द का अर्थ शरीर-यांत्रिकी की सापेक्षता के अनुरूप करते हैं तभी सही अर्थ या भाव व्युत्पन्न होता है, कठिनाई हो तो 'भारत' शब्द को मार्गदर्शक के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। 'भारत' 'भरत' से बना है, 'भरत' 'भर' शब्द से व्युत्पन्न है। 'भर' का अर्थ भरना, भरने की क्रिया है जो भरने की क्रिया सम्पन्न करता है वह 'भरत' है, जिस स्थल को भरा जाय (रिक्त को, अभाव को) वही भारत है, क्योंकि द्वितीय चक्र में यही भारत (शरीरस्थ भोजन तंत्र) सम्पूर्ण प्रजा को एक बंधन में (व्यवस्था में) बांध देता है, इसीलिये

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राष्ट्र कहलाता है। 'रास' का अर्थ लगाम या रस्सी है जो सबको एक सूत्र में पिरोकर व्यवस्थित कर देती है।[1] इस व्युत्पत्ति को देखते हुए विद्वानों को देखना चाहिए कि आज के राष्ट्रों में जिन लोगों तक साधनों की रास या राशि पहुंचती ही नहीं उन्हें किस राष्ट्र का नागरिक माना जाना चाहिये ? यदि आज के विश्वराज्य (एकराट्) को आदर्श माना जाय जिसमें नागरिक (सदस्य) तो 'देश' हैं, परन्तु इनकी दिशाएं एक दूसरे से विपरीत हैं, ऐसे में इन्हें संयुक्त राष्ट्र अर्थात् एक 'रास' में पिरोये गये देश कहना भी गलत है। तात्पर्य है कि लोक राज्यों और एकराट् अर्थात् संयुक्त राष्ट्र की टेक्नोलॉजी शरीर राष्ट्र (एक राट् - संयुक्त राष्ट्र) और उसके भीतर बसे सदस्य राष्ट्रों की तरह नहीं है। यही कारण है कि आज के राष्ट्रीय राज्य और संयुक्त राष्ट्र में हिंसा, अत्याचार, आतंक एवं क्रूरता लबालब भर गयी। इससे निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान में राज्यों ने जो टेक्नोलॉजी विकसित की है वह व्यक्ति, राष्ट्र और संयुक्त राष्ट्र में समन्वय बनाये रखने में असमर्थ है। अतः टेक्नोलॉजी के स्वरूप में परिवर्तन किये जाने चाहिये जिससे इन तीनों में समन्वय स्थापित होकर प्रत्येक व्यक्ति तक राज्य अर्थात् रंजनकारी व्यवस्था और साधन पहुंच सकें। यदि यांत्रिकी इसमें असफल होती है तो यह उसकी अनुपयोगिता का ही प्रमाण है। जो टेक्नोलॉजी विश्व का सुख-चैन छीन ले उसके बने रहने का क्या औचित्य है ? यह प्रश्न टेक्नोलॉजी का विरोध नहीं वरन् उसके सर्वभक्षी स्वरूप का विरोध है।

शरीर राज्य में टेक्नोलॉजी के अति प्रयोग और उपभोग से जिस 'कलियुग' का प्रादुर्भाव होता है, ठीक वही स्थिति आज सम्पूर्ण विश्व के लोक राज्यों में उत्पन्न हो चुकी है। टेक्नोक्रेट 'कलियुग' (कलों के योग से

---

1. श्रीमद्भागवत् में प्रत्येक प्राणी (स्त्री, गोपी, मनुष्य) का कृष्ण (जीवनी तत्त्व) के साथ कदम से कदम मिलाकर तरंग राशि (रास) के साथ चलना ही 'रासलीला' कहा गया है। मलिन चित्त लोग इसे नहीं देख सकते हैं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्पन्न विकिरण, कालिमा का युग) को अपने ज्ञान-विज्ञान से बाहर का शब्द समझकर इसकी उपेक्षा करके अपने को सांत्वना दे लें, परन्तु एक समय अवश्य आयेगा जब वे 'कलियुग' के सूक्ष्म ज्ञान-विज्ञान के समक्ष नत-मस्तक होने को बाध्य हो जायेंगे। यह इसलिये कि यहाँ पर जो भी लिखा जा रहा है, वह समय से पहले लिखा जा रहा है। समय के आने पर यह भविष्यवाणी सच हो जाएगी। यथार्थ में हाई टेक्नोलॉजी और 'कलियुग' में कोई अन्तर नहीं है। यंत्र विज्ञान या यांत्रिकी का नाम ही टेक्नोलॉजी है। आज जिसे टेक्नोलॉजी से उत्पन्न विकिरण, रेडियो एक्टिव दुष्प्रभाव कहा जा रहा है वही अर्थ कलियुग का है।

वर्तमान में विश्व टेक्नोलॉजी से उत्पन्न कोलाहल से इतना अधिक मदोन्मत्त हो गया है कि उसे अपना विनाश दीखता ही नहीं है। तैत्तिरीय उपनिषद में कहा गया है, जीवनी शक्ति ही स्वयं को मृत्यु (विनाश) में परिवर्तित कर लेती है। ईश्वर की उस माया को टेक्नोलॉजिस्ट कैसे देख सकते हैं? यह नियम अटल है। अतः जो टेक्नोलॉजी आज मनुष्य को जीवनी शक्ति दे रही है, कुछ काल बाद वही महाकाल का रूप ले लेगी। यही प्रकृति का नियम है। लोक में इस नियम को किस प्रकार की व्यवस्था के भीतर लाकर अप्रभावी या अल्प प्रभावी बनाया जा सकता है। यह अध्यात्म का विषय है। आज हमें इसी की आवश्यकता है।

38. संस्कार और देवासुर-संग्राम - हमारे शास्त्र कहते हैं कि शरीर-राज्य में यह कलियुग प्रकृति प्रदत्त प्रवृत्तियों के कारण उत्पन्न होता है। शरीर में ये प्रवृत्तियाँ एक चक्रीय गति से चलती है। वहाँ पर दैत्यों के पराभव के बाद देवों का राज स्थापित होता है। इस काल में भयंकर अराजकता उत्पन्न हो जाती है। इसीको पुराण देवासुर संग्राम कहते हैं। यथार्थ में यह युद्ध दैत्य मन या प्रवृत्ति और देव मन या प्रवृत्ति को धारण करने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं का युद्ध है जो प्राणी शरीर के मन का निर्धारण

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

करते हैं । वर्तमान विज्ञान के पुरोधा और शास्त्रों के वर्तमान व्याख्याता अध्यात्म के इस रहस्य को नहीं जानते हैं । इसी कारण ये शास्त्रों की सही व्याख्या नहीं कर सकते हैं । गीता के चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टा (4/13) की व्याख्या में शंकराचार्य ने देव-दानवों की मानसिक धारणा के आधार पर ही इसे 'मानुष लोक' की व्यवस्था कहा है । उन्होंने लोक में इस व्यवस्था के होने का समर्थन नहीं किया है । यह सब हमें दिखाई नहीं देता है, क्योंकि शरीर में देव और दानव शक्तियाँ साथ-साथ चलती हैं । शरीर-राज्य में दानवों के अराजक राज्य के प्रभाव से उत्पन्न अमानवीय प्रवृत्तियों को संस्कारित कर उनमें नवीन प्रतिभा उत्पन्न की जाती है ।

प्राणियों के शरीर में दैत्यों, असुरों और राक्षसों (सूक्ष्म जीवाणु जिन, जिन्न या जींस) के मलिन मन या इच्छा (मानस वृत्ति) को देव मन (सबको पोषण का भाव) में परिवर्तित करने की प्रक्रिया को ही संस्कार कहा जाता है । शरीर-ब्रह्माण्ड में इसी को 'देवासुर-संग्राम' कहा जाता है जिसमें अन्त में देव भाव प्रबल हो जाता है और एक नवीन व्यवस्था का प्रारंभ हो जाता है । इसे यहाँ पर स्पष्ट रूप में व्यक्त नहीं किया जा रहा है, क्योंकि यह भय बना रहता है कि इस लोक के राक्षस कहीं उसका दुरुपयोग करना प्रारंभ न कर दें । अभी कोई उच्च सत्ता ऐसा ही संकेत दे रही है । शास्त्रों के रहस्य को गोपनीय रखने का यह भी एक कारण है । इसी देव मन (देवों की विजय) के साथ 'सर्वे भवन्तु सुखिनः...' की भावना के साथ शरीर राज्य में इन्द्र (देवों) का राज्य प्रारंभ हो जाता है । लोक राज्य में भी सर्व हिताय का भाव ही प्रबल होता है ।

आज 'संस्कार' के इस रहस्य को कौन जानता है । केवल संस्कार के नाम पर खाली सूप को पीटा जाता है । इसीका परिणाम है कि विश्व का प्रत्येक व्यक्ति राक्षसी आवेश से ओत-प्रोत है । घटनाएं इसका प्रत्यक्ष परिणाम हैं । शास्त्रों में जिन संस्कारों की बात कही गई है, वे सब शरीर-

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राज्य से सम्बन्धित हैं । लोक राज्यों में इनको उसी रूप में लागू न कर परिवर्तित रूप में लागू किया जाता है । इन्हीं संस्कारों से लोक में भी मानव की प्रकृति-प्रदत्त असंस्कारित चित्त प्रवृत्तियों को संस्कारित किया जाता है। इसका विस्तृत वर्णन हमें शास्त्रों में मिलता है ।

39. संस्कार और धन- लोक में प्रचलित संस्कारों को देखें तो हमें ज्ञात होता है कि संस्कार केवल शब्दों से पूर्ण नहीं होते हैं । अशुद्ध को संस्कारित करने के लिए किसी न किसी द्रव्य का अवश्य प्रयोग किया जाता है । इसका तात्पर्य होता है, साधनों के बिना किसी भी प्राणी या जीव का संस्कार सम्भव नहीं होता है । लोक भाषा में कहें तो हम कह सकते हैं कि आवश्यक साधनों के अभाव में किसी भी व्यक्ति को संस्कारित नहीं किया जा सकता है । साथ ही यदि कोई अति धन संपत्ति (साधनों) का स्वामी होता है, तो वह भी 'धन' के अतिरेक के कारण सामाजिक मर्यादा का उल्लंघन कर प्रकृति के असंस्कारित प्रवृत्तियों की सीमा में चला जाता है। इसी को अराजक स्वभाव भी कहा जाता है।

शब्द 'धन' को लोग सामान्यतः स्थूल संपत्ति के रूप में देखते हैं । 'धन' का अर्थ होता है द्रव्य में निहित 'धनात्मक बल' । लोक में हम सर्वत्र देख सकते हैं, अति धनाढ्य लोगों के पुत्र और वे स्वयं अति धन के प्रभाव से उद्दण्ड, अत्याचारी और हत्यारे हो जाते हैं । यही हाल सत्ताधारी व्यक्तियों, उनके पुत्रों और समर्थकों का है, सत्ता स्वयं धनात्मक गुण को धारण किये रहती है । जब उसके धनात्मक अतिरेक की विद्युत व्यक्ति के मस्तिष्क में कौंधती है, तो वह अपने मध्यम संस्कारों से च्युत होकर राक्षसी कृत्यों में संलग्न हो जाता है । यही दैत्यों (demon) का स्वभाव होता है। इसी कारण धनी व्यक्ति स्वर्ग प्राप्त नहीं कर सकता है (महाभा.,बाईबल)। आज सत्ताधारी वर्ग उनके पुत्रों, संबंधियों और समर्थकों के ताण्डव को सर्वत्र देखा जा सकता है । इससे निष्कर्ष निकलता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

है कि मनुष्य को साधन हीनता और अति साधन, दोंनों स्थितियाँ असंस्कारित कर देती हैं, उन्हें अराजक बना देती हैं। अतः राज्य में साधनों के सम्यक् वितरण से ही व्यक्तियों को संस्कारित, शिष्ट एवं सभ्य बनाया जा सकता है। आज के टेक्नोविद राज्यों की इस स्थिति को देखने में क्यों असमर्थ हैं? महाभारत शांति पर्व (राजधर्मानुशासन पर्व) में अध्याय 1 से 43 तक अति साधन हीनता (दरिद्रता) और साधनातिरेक से उत्पन्न स्थितियों का विवेचन है। 'राजनीति' भी रंजन करने की एक टेक्नीक है। 'नीति' का अर्थ टेक्नीक या कौशल होता है। स्पष्ट है कि 'जन रंजन' जो राज्य का कर्तव्य है वह टेक्नोलॉजी (यांत्रिकी, कल) के बिना संभव नहीं है। अतः सभी को शांति-पर्व के इन अध्यायों का अध्ययन करना चाहिये, इन्हीं अध्यायों में राज्य में शांति और व्यवस्था बनाये रखने के सूत्र दिये गये हैं। इसी में मध्यम मार्ग के रहस्य दिये हैं।

40. धन के अतिरेक का ताण्डव - पुराणों में धन से उन्मत्त राक्षसी वृत्ति के मनुष्यों के अत्याचार का बहुत प्रकारों से वर्णन है। रावण, हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष, महिषासुर आदि सत्ता और धन के अतिरेक से ही क्रूर और हिंसाचारी हो गये। श्रीमद्भागवत दशमस्कन्ध (उ.) अध्याय 51 की हैहय वंशीय सहस्त्रबाहु कार्तवीर्य अर्जुन की कथा दी जाती है। इसके सहस्त्र (हजार) भुजाएँ थीं। उसने सत्ता और धन के दंभ (अतिरेक) में परशुराम के पिता महर्षि जमदग्नि की कामधेनु का अपहरण कर लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि परशुराम के हाथों वह मारा गया। महाभारत में भी यह कथा है। कथा कहीं संक्षेप में और कहीं विस्तार से दी गयी है।

व्याख्या - हैहय का अर्थ होता है, जो हय अर्थात् ऊर्जा रूपी अश्व पर बैठा हुआ है। हय का अर्थ अथाह साधन या ऊर्जा होता है अथवा 'हय-हय' के दो बार प्रयोग का अर्थ होता है भरपूर संपत्ति (ऊर्जा) का होना, जिसे उसने हजार हाथों से एकत्र किया है। इसी कारण उसे सहस्त्रबाहु

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

कहा गया है । कार्तवीर्य का अर्थ होता है, अत्यन्त संवेदनशील, उन्मत्त ऊर्जा । ऊर्जा धन का ही रूप है । इस कथा को लोक में देखें । किसी भी सत्ताधारी व्यक्ति को देखें उसके हजार हाथ होते हैं । पुलिस, प्रशासन, माफिया, गुण्डे, व्यापारी आदि सब, उनके हजार हाथ हैं । जिस प्रकार ये हजार हाथ धन लूटते हैं, इनको सब कोई प्रत्यक्ष देख रहे हैं । इन हजार हाथों से लूटे गये धन के धनात्मक अतिरेक (उन्मत्त अदृश्य तरंगें) इनके मस्तिष्क को विकृत कर देती हैं । परिणाम स्वरूप ये और इनके हजारों हाथ अत्याचार का ऐसा ताण्डव मचा देंते हैं कि जनता त्राहि-त्राहि करने लगती है । इसका मूल कारण अनियंत्रित 'हाई टेक' है, जो 'धन' और 'सत्ता' का केन्द्रीकरण कर देती है । विरोध करने वालों को यही 'हाई टेक' बुलडोजरों, बंदूकों, आँसू-गैस, भ्रष्टाचार, रेड टेप, माफिया, झूठे केस, न्यायालय और कानून की निष्क्रियता आदि हजार हाथों से रौंद देती हैं । इसी की प्रतिक्रिया आज विश्व में हिंसा, मानसिक त्रास, भय और आतंकवाद के रूप में दिखाई देती है । मस्तिष्क विकृति का यहाँ पर शास्त्रीय अर्थ लेना चाहिये । धन के अतिरेक से सर्वप्रथम शरीर के भीतर स्थित जीवों का मन मलिन हो जाता है, उन्हीं में धन की लिप्सा और उसके द्वारा अत्याचार के भाव उत्पन्न होते हैं । यही मानसिक वृत्ति मनुष्य के बाहरी मन को भी प्रभावित कर उसे अत्याचार में आकंठ डुबा देती है ।

शास्त्र कहते हैं कि उत्पादन के साधनों का केन्द्रीकरण अति उत्पादन, अनावश्यक (अति) उपभोग की प्रकृति प्रदत्त असंस्कारित प्रवृत्ति की शरीर-राज्य की टेक्नोलॉजी और उसके परिणाम देखकर मन और बुद्धि के सहयोग से प्राकृत अराजक प्रवृत्तियों (शूद्र स्वभाव) को संस्कारित किया जा सकता है (देखें – महाभा. शांति पर्व, अध्याय 301) । यहाँ पर शूद्र का अर्थ 'क्षुद्र' अर्थात् उन अदृश्य या दृश्य 'क्षुद्र' जीवाणुओं के स्वभाव से है जो प्रत्येक प्राणी के शरीर में होते हैं । वह प्राणी के स्वभाव या प्रवृत्ति

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

का निर्धारण करते हैं। यदि इन्हें अति अल्प मात्रा में ऊर्जा मिलती है तो ये साधनों को उपलब्ध कराने के लिये स्थूल प्राणियों को प्रेरित कर उन्हें येन-केन-प्रकार से साधन (अन्न, आहार) लाने को बाध्य कर देते हैं। ऐसे में अभाव ग्रस्त व्यक्ति चोरी आदि करता है। यदि साधनों की अत्यधिक उपलब्धि होती है तो यही क्षुद्र जीवाणु मनुष्य के मस्तिष्क को अति ऊर्जा के अतिरेक से उत्तेजित कर अमानवीय कार्य करा देते हैं। महाभारत में दैत्य कुल के सूक्ष्म जीवाणुओं (bacteria) का ही दैत्यों का मनुष्य रूप में जन्म लेना कहा गया है। वैज्ञानिकों को आश्चर्य नहीं होना चाहिये कि जिसे वे आज बैक्टेरियोलॉजी कहते हैं, वेदों, उपनिषदों और पुराणों में इसका विशद वर्णन है।[1]

41. सत्ता पाई काह मद नाही - अभी तक हम लोग पढ़ते रहे हैं कि 'सत्ता पाई काह मद नाही' (तुलसीदास) तथा 'सत्ता मनुष्य को भ्रष्ट कर देती है, निरंकुश सत्ता उसे निरंकुश भ्रष्ट बना देती है, (लॉर्ड एक्टन)। इन बातों को सभी पढ़ते हैं, परन्तु इसके पीछे कौन सी शक्ति ऐसी होती है जो सत्ता प्राप्त व्यक्ति को भ्रष्ट और निरंकुश बना देती है? इसका उत्तर हमें नहीं मिलता है। यहाँ पर इस प्रश्न का समाधान कर दिया गया है। भ्रष्टता और निरंकुशता का सम्बन्ध मानव शरीर में निवास करने वाले सूक्ष्म जीवाणुओं (दैत्यों) और उन पदार्थों से होता है, जिनके आश्रय में ये दैत्य रहते हैं। द्रव्य में धनात्मक आवेश भरा होता है। उसी आवेश का जब ये जीवाणु भक्षण करते हैं, तो इनमें अति लोभ एवं शक्ति आ जाती है। यही लोभ, लिप्सा और मोह इन जीवाणुओं को अनन्त काल तक बनाये रखने के भाव जाग्रत कर शरीर राज्य में भी भ्रष्टता उत्पन्न कर दूसरों के साधनों को छीन लेते हैं। यही वृत्ति मनुष्यों में तब और प्रबल हो जाती है जब वह लोक-

---

1. देखें, 'महाभारत आदि प. (सम्भव पर्व), अ. 67एवं अध्यात्म, विज्ञान, राजयोग = स्वराज, ले. हरिदत्त शर्मा, पृ. 91-93, 104-108।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

राज्यों में सत्ता प्राप्त कर लेता है। उसकी मानसिक वृत्ति यहाँ भी अन्य लोगों के साधनों को छीनकर स्वयं के लिये अनन्त काल तक के साधन जुटाने में लीन हो जाती है। वह अपनी भोगलिप्सा और सबके ऊपर नियंत्रण रखने के लिये अनेक क्रूर कर्मों को करता रहता है। सत्ता स्वयं धनात्मक शक्ति का रूप होती है। शास्त्र कहते हैं, मलिन चित्त या मन वाला व्यक्ति सदा इन दैत्य भावों या प्रवृत्तियों से घिरा रहता है।

चित्त की मलिनता को समझने के लिये उन वैज्ञानिक तथ्यों को जानना होगा जिसे शास्त्र अपने ढंग से व्याख्यायित करते हैं। यह अध्यात्म टेक्नोलॉजी की महत्वपूर्ण क्रिया है। हम इसे 'शब्द-विज्ञान' के द्वारा स्पष्ट करेंगे। उसे सभी समझ भी सकेंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है।

42. सत्तामद और अत्याचार का वैज्ञानिक रहस्य - लोक में 'चित्ति' उस वस्तु को कहते हैं जो नमी या गीले द्रव्य में सफेद फफूंदी (fungus) के रूप में उगती है। इसी 'चित्ति' या फफूंदी के सूक्ष्म जीवाणु (bacteria) ही 'चित्त' के वाहक होते हैं, इन्हीं को चित्त भी कह सकते हैं।[1] ये सूक्ष्म जीवाणु जब स्थूल रूप ग्रहण कर द्रव्य के उपभोग में लिप्त हो जाते हैं तो उसी स्थिति को मन या चित्त का मलिन होना कहा जाता है। चित्त को धारण करने वाले ये जीवाणु अपनी असीमित इच्छाओं की पूर्ति के लिये मनुष्य के बाहरी मन को उत्तेजित कर उसे धन, संपत्ति, सत्ता आदि को जमा करने के लिये अन्य लोगों से जीवन के साधनों को छीनकर सर्वत्र अराजकता और दमन की प्रवृत्ति उत्पन्न कर राज्य की व्यवस्था को ही भ्रष्ट बना देते हैं। चित्त की मलिनता को दूर करने के उपाय स्वयं शरीर राज्य में किये गये होते हैं। योग की पुस्तकों में इनका वर्णन किया गया है। विस्तार यहाँ पर नहीं दिया जा रहा है कि किस टेक्नीक से चित्त के दर्पण की कालिमा को दूर किया जाता है।

---

1. महाभारत में इसे 'विप्रचित्ति' दानव कहा गया है (आदि. प., सम्भवपर्व 67/4)।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

चित्त या मन जिन प्रवृत्तियों को धारण करता है, उसका स्वभाव और क्रिया उसीके अनुरूप अच्छी या बुरी हो जाती है। इसी आधार पर 'मन एव मनुष्याणां', मन ही मनुष्य है, कहा गया है। इसी आधार पर शास्त्रों, योगियों, तथा संतों ने 'मन' को शुद्ध (पवित्र) रखने पर बल दिया है। आज के टेक्नोक्रेटों को मन के उस स्वरूप का ज्ञान ही नहीं है। उन्हें तो केवल प्रचार और व्यापार चाहिये। किस टेक्नोलॉजी का क्या प्रभाव मन या चित्त पर पड़ता है, इससे उनका कोई लेना-देना नहीं है। कौन सी टेक्नोलॉजी मानव मन को गलत दिशा की ओर जाने को प्रेरित करती है, कौन सी कैंसर एवं अन्य असाध्य रोगों को उत्पन्न कर मनुष्य को नरक यातनाओं में डाल देती है, इसका कोई लेखा-जोखा आज के प्रबुद्धों के पास नहीं है। उनकी टेक्नोलॉजी आज के सामान्य व्यक्ति और महिलाओं को कैसी यातना दे रही है, यह कोई कल्पना की बात न रह कर प्रत्यक्ष दिखाई देती है। विश्व के प्रत्येक कण-कण में सबको दिखाई देती है। सब इन घटनाओं से सिहर उठते हैं फिर भी 'हाई-टेक - हाई-टेक' की अन्धी दौड़ में कोई भी पीछे रह जाना नहीं चाहता है।

43. पुनर्जन्म और मध्यम मार्ग – मन ही मनुष्य है, के अनुरूप जो मनुष्य दैत्य मानसिकता को धारण करते हैं, वे ही दैत्य कहे जाते हैं, जो देव भाव को धारण करते हैं, वे देवता कहे जाते हैं। देव और दानव भाव शाश्वत हैं। देवता अमर इसी अर्थ में कहे जाते हैं कि उनका निवास उन वृक्षों और पादपों में रहता है जो प्राणी मात्र की लोक यात्रा का संपादन करते हैं। इस प्रकृति में ये वृक्ष (स्थावर जीव) अमरता के प्रतीक हैं, काटने पर पुनः बढ़ जाते हैं। बीजों के रूप में ये पुनः उग कर अपनी अमरता को प्रमाणित कर देते हैं। दैत्य ऐसी संजीवनी विद्या जानते हैं कि वे मरकर भी पुनः जीवित हो जाते हैं। मनुष्य (शरीरधारी प्राणी) ही एक ऐसा जीव है जिसका मन भी शरीर की मृत्यु के साथ मर जाता है। आत्मा को पुराणों में

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मन भी कहा है । नयी सृष्टि के साथ मन पुनः उत्पन्न होता है । इसी अर्थ में आत्मा या मन को 'शरीरी' कहते हैं । इसका अर्थ है - मन पहले जिस शरीर (मूर्त रूप) को धारण करता है, उसे छोड़ देता है और पुनः नया शरीर धारण कर लेता है ।[1]

इसी को पुर्नजन्म (गीता 2/22) या रिविलेशन (बाईबल, प्रकाशना 2;7) कहते हैं । कुरान में इस पुर्नजन्म को रहस्यमय शब्दों में स्वीकार किया गया है । पुराणों में भी इस प्रकार की लेखन शैली हमें मिलती है । यथार्थ में हम शरीर-टेक्नोलॉजी से अनजान होते हैं । इसी कारण शास्त्रों के अर्थों को समझ नहीं पाते हैं । यहाँ पर भी रहस्य को पूर्णतः नहीं बताया जा रहा है, अतः यह भी कल्पना लग सकती है । पुराण और कुरान दोनों में बार-बार कहा गया है कि जो लोग अच्छे कर्म करते हैं वे स्वर्ग/जन्नत जाते हैं । दूसरे जो आततायी होते हैं वे नरक में जाते हैं । पुराण इसे स्वर्ग-नरक और मोक्ष के दो मार्ग कहते हैं । इस प्रकार यह ईश्वरीय यांत्रिकी कुछ को स्वर्ग या नरक देती है तो कुछ को मोक्ष प्रदान करती है । दोनों ही घटनाएं सत्य हैं ।[2]

पुर्नजन्म का वर्णन कुरान में सूरः 50, क़ाफ़ में दिया गया है । इसे वे ही समझ सकते हैं जो पिण्ड यांत्रिकी के रहस्यों से परिचित हैं । यहाँ पर सत्य के दोनों मार्गों का वर्णन रहस्य के रूप में किया गया है । अतः हम भी उसकी व्याख्या यहाँ पर नहीं करेंगे । यह भाषा वैसी ही है जैसी महाभारत में अनेक स्थलों पर है (देखें, महाभा. शा.प. 318/78) ।

यहाँ पर मध्यम मार्ग की बात हो रही है । मुहम्मद साहब के वफ़ात (देहान्त) के तत्काल बाद उमर बिन ख़त्ताब (रजि.) ने घोषणा की - "मुनाफ़िक़ (कपटाचारी) कहते हैं कि हुज़ूर का इन्तकाल हो गया मगर वे

1.(गीता (2/18-24) ।

2.गीता (8/15-16) ।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

झूठे हैं, बल्कि वे तो मूसा अलैहि. की तरह ख़ुदा से मिलने गये हैं, थोड़ी देर में आ जायेंगे और जो कोई यह कहें कि नबी सल्ल. मर गये हैं, मैं उसकी गर्दन इस तलवार से उड़ा दूँगा।" इसी के बाद अबू बक्र (रजि.) ने कहा था "जो मुहम्मद की पूजा करता हो तो उनके लिये वे मर गये हैं और जो ख़ुदा की पूजा करता हो तो वह अमर हैं।"[1] यह कथन स्पष्ट कर देता है कि प्राणी शरीर भौतिक जगत और आत्म जगत (मूर्त और अमूर्त) दोनों का मध्यमान है। यही बात गीता (2/18-20,22) में कही गयी है। शरीर ही मृत्यु को प्राप्त होता है, उसमें रहने वाली आत्मा कभी नहीं मरती है। वह पुराने वस्त्र छोड़कर नये वस्त्र पहन लेती है। इस प्रकार सभी धर्मों के शास्त्रों का कथन समान है कि मनुष्य मूर्त और अमूर्त का योग है तो उसकी सभी क्रियायें भी प्रत्येक क्षेत्र में समन्वयात्मक होनी चाहिये, अन्यथा एक मनुष्य भौतिक यांत्रिकी के अति प्रयोग से दूसरे मनुष्य के अधिकारों को यांत्रिकी की अमूर्त सामर्थ्य से छीन लेता है। इसका तात्पर्य यह निकलता है कि यांत्रिकी का अति बल दूसरे मनुष्य के लिये आवश्यक भौतिक साधनों को छीन कर उसके भौतिक और आत्मिक दोनों शरीरों को अभाव का त्रास देता है, क्योंकि शरीर और आत्मा एक दूसरे के आश्रित रहते हैं। इसीसे अराजकता और आतंकवाद अपने सहस्त्र बाहुओं के साथ विनाश का महांताण्डव प्रारंभ कर देते हैं।

हमारे टेक्नीविद कहेंगे कि ये बातें कहाँ पर लिखी हैं? उनको निवेदन है कि शास्त्रों की जटिल शैली को लोक यांत्रिकी की तरह समझना सरल नहीं है। ये निष्कर्ष या कथन पिण्ड-यांत्रिकी के गहन अध्ययन के पश्चात् ऋषियों ने निकाले हैं। यहाँ पर विस्तार संभव नहीं है। केवल एक कथन देखें - सब कुछ स्पष्ट हो जायेगा - "परमात्मा भिन्न है और जीवात्मा

---

1. कुरआन मजीद, हिन्दी तर्ज़ुमा - मौ. फ़तेह मुहम्मद खाँ, फ़रीद बुक डिपो, नई दिल्ली, मुकद्दमां, पृ. 37-38; संस्करण 2006।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

भिन्न, क्योंकि परमात्मा जीवात्मा का आश्रम है, परन्तु संत (ज्ञानी) उन दोनों को एक ही देखते और समझते हैं (महाभा. शां.प. 318/78)।"

इसमें कही गई दोनों बातें सही हैं केवल देखने का दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न है। यही सच ऊपर मुहम्मद साहिब के बफ़ात के बारे में भी है, जो शास्त्रों को पढ़ना जानते हैं, वे ही इसकी व्याख्या कर सकते हैं।

शरीर ही शास्त्र है। इसमें देव एवं दैत्य मानसिकता धारण करने वाले जीवों का सदा एक दूसरे से संघर्ष चलता रहता है। एक कालखण्ड विशेष (कलियुग) में यह प्रतिद्वन्दता चरम पर पहुँच जाती है। इसमें प्रौद्योगिकी जिसे माया भी कहा जाता है, इस युद्ध और अराजकता की सहायक बन जाती है। यह प्रौद्योगिकी जीवों को यंत्रारूढ़ कर उनकी मनःस्थितियों में परिवर्तन ला देती है। यांत्रिकी की गति के साथ स्वयं को समायोजित करने के प्रयास में वह साधनों का अति उपभोग करना प्रारंभ कर देते हैं। शरीर-राज्य में कुछ काल के लिये नया उत्पादन बंद हो जाता है। इसे सूखा, अनावृष्टि और अकाल कहा गया है। यही अकाल शरीर स्थित जीवों को साधनों पर अनन्त काल के लिये नियंत्रण हेतु परस्पर संघर्षरत कर देता है। इसका परिणाम सतत् अराजकता, भय, युद्ध, हत्या, दुष्कर्म, क्रूरता आदि होता है। इसी को पुराण 'नरक' कहते हैं। इस 'नरक' में मनुष्य सदा शारीरिक और मानसिक त्रास की घोर पीड़ा, भूख, भय और असुरक्षा में पड़े रहते हैं। जब अति हो जाती है, तो यह मनुष्य अर्थात् 'मन' शांति और समानता की कामना करता है। इसी को शास्त्र 'धारणा' भी कहते हैं। बुद्धि इस धारणा को दृढ़ करती है और सभी प्राणी (मनुष्य) 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की कामना कर स्वयं को यम-नियम (पतंजलि योग सूत्र 2/29-32) की मर्यादाओं (अनुशासन, योग सूत्र 1/1) में रहना स्वीकार कर लेते हैं। यहीं से मध्यम मार्ग प्रारंभ हो जाता है। इसी मध्यम मार्ग की धारणा से मनुष्यों के मन और शरीर दोनों में समन्वय की

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धारणा प्रबल हो जाती है। यह मध्यम मार्ग अन्ततः राज्य (व्यवस्था, आदि का संगठन) के रूप में परिणत हो जाता है। महाभारत शांतिपर्व (राजधर्मानुशासन पर्व अध्याय 1 से 43) में उपर्युक्त सभी बातों का वर्णन किया गया है। व्यवस्था (राज्य या राजा) होने की मन की कामना को ही पुराण मनुष्यों का ब्रह्मा के पास जाकर राजा को नियुक्त किये जाने की प्रार्थना के रूप में वर्णन करते हैं। शरीर पिण्ड में नरक और स्वर्ग (अराजकता और व्यवस्था) के स्वरूप का विवेचन करने वाले गरुड़ पुराण में अराजकता से मुक्ति और व्यवस्था (राज्य) की स्थापना की धारणा को इस प्रकार व्यक्त किया गया है -

सर्वेषां मंगलं भूयात् सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मां कश्चिद् दुःख भागभवेत्।।

(गरुड़ पु. 2/35/52 एवं भविष्य पु. 3/2/35/14)

सभी का मंगल हो, सभी नीरोग हों, सभी मंगल का ही दर्शन करें, किसी को कोई दुःख न हो।)

44. राज्य होने पर भी अराजकता क्यों ? – पुराण अराजकता से मुक्ति और राज्य (राजा) की महत्ता को अपनी विशिष्ट शैली में बता देते हैं। जो इस शैली को जानता है, वह इसको जान लेता है, अन्यथा इसे केवल कल्पना कहकर तर्क-वितर्क करता रहता है। पिण्ड शरीर में राज्य बन जाने के कुछ काल के बाद अराजकता की चक्रीय गति पुनः पुनः आती है और उसका निवारण भी होता रहता है। ऊपर देख लिया गया है कि राज्य की उत्पत्ति 'सर्वें भवन्तु सुखिनः' की सार्वभौम भावना (मन) पर हुई है। इसके बावजूद लोक राज्यों में घोर अराजकता की उपस्थिति क्यों है ? इसका उत्तर नीचे दिया जाता है।

मनुष्यों का बाह्य मन भी लोक की अराजकता को इसी प्रकार बुद्धि की सहायता से राज्य (व्यवस्था) की स्थापना के प्रयत्न करता है और

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

धीरे-धीरे यह अपने पूर्ण स्वरूप में विकसित हो जाता है। लोक राज्यों में भी कालक्रम के अनुसार आर्थिक, राजनीतिक एवं अन्य यांत्रिकियों की गति में वृद्धि होती जाती है। इसी के कारण मनुष्यों के आंतरिक दैत्य भाव जाग्रत होकर सत्ता और संपत्ति पर वर्चस्व बनाये रखने के लिये मानव पिण्ड को उकसाते हैं। परिणाम में वह यम-नियमों और अनुशासन को भूलकर लोक राज्यों में अराजकता, अत्याचार, हत्या आदि करने लग जाता है और राज्य 'नरक तुल्य' हो जाते हैं। लोक में इस 'नरक' (सड़ी-गली व्यवस्था, ग्लानि (गीता 4/7) से मुक्ति के लिये युद्ध, क्रांति, आतंक आदि शक्तियों का प्रादुर्भाव हो जाता है।

शरीर-राज्य में तो इस स्थिति का निवारण युद्ध या क्रांति से ही होता है, क्योंकि वहाँ कोई और मार्ग नहीं होता है, परन्तु लोक राज्यों में इन अराजक स्थितियों को नियंत्रित किया जा सकता है और एक ऐसी व्यवस्था को बनाये रखा जा सकता है जो 'नरक और स्वर्ग' की चक्रीय अनिवार्यता से मुक्त हो सकती है। इसी कारण शास्त्रों ने मनुष्य जन्म को सब प्राणियों में श्रेष्ठ कहा है, क्योंकि वह अपनी क्रियाशक्ति (हाथ) और बुद्धि से लोक व्यवस्था को मध्यम मार्ग पर चलाकर सभी प्रकार की प्रौद्योगिकी के अतिवादी स्वरूप को नियंत्रित कर सकता है। वह स्वयं ईश्वरीय यांत्रिकी का एक श्रेष्ठ स्वरूप है (देखें, महाभा. शा. प. 180/11-19)। इसके लिये उसे वैश्विक स्तर पर अनुशासन में रहकर यम-नियमों का सतत् पालन करने की आदत विकसित करनी होती है। जब ऐसी स्थिति आती है तो लोक राज्य अराजक स्थिति या घोर कलियुग के अतिवाद से सुरक्षित हो जाता है अन्यथा मानव निर्मित अनियंत्रित हाई टेक्नोलॉजी का अतिवादी स्वरूप अराजकता का पर्याय बन जाता है। विश्व के इतिहास को देखें जो भी सभ्यता यांत्रिकी की माया को न समझकर उसके अतिवादी स्वरूप को वरदान मानती रही, वे नष्ट हो गईं।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

शरीर-राज्य में ये स्थितियाँ सदा दिन-रात की तरह आती रहती हैं। यहाँ पर शरीर-राज्य और लोक-राज्य का जो विश्लेषण किया गया है, उसका आधार शास्त्र हैं। अब कोई टेक्नीविद यह नहीं कह सकता है कि शास्त्र कपोल कल्पना के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं। यह उस प्रश्न का भी उत्तर है जो पूछते हैं, शास्त्र ऐसा कहते हैं, उसका क्या प्रमाण है ? शरीर-ब्रह्माण्ड की सम्पूर्ण व्यवस्था का लेखा-जोखा हमारे शास्त्रीय ग्रन्थों में ऋषियों ने सुरक्षित रखा है। जो इनको पढ़ना जानता ही नहीं, तो शास्त्र क्या कर सकता है ? उसको दोष कैसे दिया जा सकता है ? शरीर-ब्रह्माण्ड ही शास्त्र है और लिखित शास्त्रों की प्रयोगशाला भी।

यूरोप में हाब्स, लाक और रूसो ने इंग्लैण्ड और अन्य देशों में हुए गृहयुद्धों की अराजक विभीषिका का विश्लेषण कर राज्य की उत्पत्ति के सामाजिक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इन तीनों विचारकों का काल सतरहवीं-अठारहवीं सदी तक था। उस समय यूरोप में नयी प्रौद्योगिकी का जन्म हो चुका था और प्रत्येक मनुष्य एक दूसरे पर प्रभुत्व पाने की होड़ में इस यांत्रिकी का प्रयोग कर रहा था। इसी के परिणाम स्वरूप सर्वत्र अराजकता का ताण्डव था। इसी अराजक स्थिति ने हाब्स को यह सोचने पर विवश किया कि इस अराजकता को व्यवस्था (राज्य) में बदलने के लिये कौन-सी आधारभूत स्थितियाँ उत्तरदायी हैं ? उनका गहन अध्ययन किया गया। उसी अध्ययन के निष्कर्षों पर उसने निष्कर्ष निकाला कि राज्य (राजा) को शक्तियाँ दी जायं, जिससे सर्वत्र व्यवस्था स्थापित होकर शांति एवं भय रहित स्थिति उत्पन्न हो सके।

राज्य के सामाजिक समझौता सिद्धान्त का यूरोप सहित विश्व में व्यापक प्रभाव पड़ा। इसने राज्यों के निरंकुश स्वरूप का मानवीयकरण करने के लिये मनुष्यों के अधिकारों को भी सुरक्षा देने पर बल दिया। इस काल में भारत के लोग सोये रहे, जबकि मनुस्मृति, महाभारत तथा प्रायः सभी पुराणों

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

में प्रजा की सहमति से ही राजा (मनु) को बनाये जाने का उल्लेख मिलता है। शरीर-राज्य में राजा की उत्पत्ति के साथ राज्य की भी स्थापना हो जाती है। अतः वहाँ राजा और राज्य में कोई तात्विक भेद नहीं है। हाब्स, लाक और रूसो का समझौता सिद्धान्त लोक राज्यों में उत्पन्न अराजक स्थितियों का परिणाम था। इसमें राज्य यांत्रिकी के साथ आर्थिक प्रौद्योगिकी के स्वरूप और उसके प्रभाव का विशेष वर्णन नहीं किया गया है। यांत्रिकी को एक साधन के रूप में स्वीकार किया गया है, परन्तु उसकी माया (जैसा कि पुराण कहते हैं) का कोई वर्णन नहीं है। तात्पर्य यह है कि यूरोपीय सामाजिक समझौता सिद्धान्त पुराणों की तरह मनुष्य, राज्य और टेक्नोलॉजी का सांगोपांग अध्ययन नहीं करता है। यही कारण है कि उसमें सत्य के अंश होते हुए भी आज विश्व–मनुष्य के भीतर बैठे दैत्यों के अतिवादी उत्प्रेरण के कारण उसने स्वयं को ऐसी स्थिति में डाल लिया है कि उसे इससे मुक्ति का कोई उपाय नहीं सूझता है।

45. योगियों का भ्रम - यथार्थ में आज योग का जैसा रूप प्रचलित हो गया है, वह भी औद्योगिक घरानों द्वारा अपने शोषण की तकनीक में वृद्धि करने का एक साधन बन गया है। जितना अधिक हाईटेक होता है, लोगों की अंगुलियाँ (वृत्ति, कार्य के अवसर) कटती जाती हैं और प्रौद्यागिकी डाकू अंगुलिमाल का स्वरूप ग्रहण करती जाती है। बौद्ध कथाओं में जिस अंगुलिमाल[1] का वर्णन है, वह आज प्रौद्योगिकी के रूप में सम्पूर्ण विश्व को त्रास दे रहा है, योगियों की समझ में यह बात क्यों नहीं आ रही है?

यथार्थ में वर्तमान में ऐसे संत और योगी भी हैं जो समाज की दशा और दिशा बदलने के लिये प्रयासरत हैं, परन्तु वे औद्योगिकरण के कलियुगी (हाई-टेक) स्वरूप को समझने में असमर्थ हैं। शरीर-ब्रह्माण्ड में जब कलियुग अपने पूर्ण यौवन में आता है तो उसके समक्ष महान् ऋषि-

1. विज्ञान ने जिस तरह मल्टीनेशनल (बहुराष्ट्रीय) और ग्लोबलाइजेशन (वैश्वीकरण) जैसे अंगुलिमालों की रचना की, उसका सैद्धान्तिक आधार देखें- 'भारत के लोगों का संविधान और दर्पण' ले. हरिदत्त शर्मा, पृ. 18-22।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

महर्षियों का योग और तप भी कोई काम नहीं करता है। ऐसा शास्त्रों में हमें वर्णन मिलता है। रावण महान् योगी था, कृष्ण को भी योगेश्वर कहा जाता है। अन्त समय में इन दोनों की भी कुछ न चली। ये योगी आज की तरह के प्रतीकात्मक लौकिक योगी नहीं वरन् शास्त्रीय योगी थे। शरीर-राज्य में ऐसा ही होता है, क्योंकि वहाँ मोक्ष भी योग का आवश्यक आयाम होता है। उसी उद्देश्य के अनुरूप यह ईश्वरीय टेक्नोलॉजी कार्य करती हैं।

लौकिक जगत् में शास्त्र सम्मत योग वह है, जिसे गीता में 'राजविद्या' कहा गया है। इस 'राजविद्या' को अन्य सभी प्रकार के योगों का राजा अर्थात् उनका भी रंजन करने वाली जीवनदायी सत्ता कहा गया है (गीता 9/2)। इसीको 'राजयोग' भी कहते हैं। 'राजयोग' से ही राज्य में शांति-व्यवस्था स्थापित होती है। जब शांति और व्यवस्था स्थापित होती है, तो उसी को अध्यात्म कहा गया है। 'योग-क्षेम' (गीता 9:22) के बिना 'मन' सदा चंचल बना रहता है। चंचलता को ही मानसिक त्रास कहा जाता है (गीता 6:34)। 'मन' ही मनुष्य है, जब मन ही योग-क्षेम से रहित होता है तो वह सदा भयभीत रहता है तब वह प्रत्यक्ष ईश्वर को भी पहचान नहीं सकता है। यही स्थिति आज सबकी हो गयी है। हमारे भारत में कैसे योगी हैं कि वे राजयोग को पहचान नहीं पा रहे हैं? आज के टेक्नोक्रेटी योगियों से भले तो वे संत थे जो लोक में 'हरि को भजे सो हरि को होई' की अलख जगाते रहते थे। अब 'हरि' क्या है? जो इसे जानते ही नहीं हैं तो उनको कैसे समझाया जा सकता है? हरित पर्यावरण जो प्राणी मात्र के जीवन का आश्रय है, वह 'हरि' है। वही सबके कष्टों का हरण करता है। 'अध्यात्म, विज्ञान, राजयोग = स्वराज में 'हरि' के अनेक नामों को बताया गया है। अतः हमारे संत और योगियों को उसी हरि से सबका योग कराने की टेक्नोलॉजी विकसित करने, उसे व्यवस्थित करने और उसे स्थापित करने के सहायक योग (साधन योग) को विकसित करने की ओर प्रवृत्त

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होना होगा, अन्यथा हरि के अशास्त्रीय 'फास्ट फूड' स्वरूप वाली योग विद्या किसी भी तरह 'योग' नहीं कही जा सकती है । यह तभी शास्त्र-सम्मत है जब इसे केवल संकटकाल के लिये प्रयोग किया जाता है । दीर्घ काल तक इसका योग मनुष्यों के मन को मलिन एवं विकृत कर देता है । मन में मलिनता से मोह-लोभ आदि का अतिवाद समाज में चल पड़ता है और सर्वत्र अराजकता अनेक रूपों में फैल जाती है । तब साधु-संतों को भी अपनी सुरक्षा के लिये 'अंगुलिमाल टेक्नोलॉजी' की शरण में माथा टेकना होता है -'आये थे हरि भजन को ओटन लगे कपास' ।

'फास्ट फूड' संस्कृति को एक प्रतीक के रूप में लिया जाना चाहिये। अन्य सभी क्षेत्रों में भी इसके प्रभाव को देखा जाना चाहिये । फास्ट! फास्ट! कितना फास्ट? तीव्र गति, तीव्र वेग या त्वरा ही 'फास्ट' है । वेद कहते हैं कि यांत्रिकी को इतनी 'त्वरा' में मत चलाओ कि सर्वत्र यमराज का ही राज्य हो जाये, क्योंकि 'त्वरश्चिद् राजा' (ऋग्वेद 7.41.2) को यमराज कहते हैं । त्वर का अर्थ त्वरा या तीव्रवेग है (निरुक्त 12.8.2) । वेग पूर्वक दौड़ने अर्थात् रंजन करने (राजा) या अति वेग के रंजन चाहने वाला चित्त परिणाम में विनाशकारी होता है । इसी दौड़ के वेग में यमराज छिपा रहता है या टेक्नोलॉजी की हाई स्पीड विनाश का कारण बन जाती है। हाई टेक की दौड़ लगाने वाले विश्व यांत्रिकी से उत्पन्न यमराज और उसके प्रभाव को हम प्रत्यक्ष देख सकते हैं ।

वैज्ञानिकों एवं टेक्नीविदों को वेदों के वैज्ञानिक ज्ञान के प्रकाश को इस एक उदाहरण से समझ लेना चाहिये कि वैदिक ऋषि इससे विश्व को क्या संदेश दे रहे हैं । इसी संदेश से उत्पन्न ज्ञान को अध्यात्म कहा जाता है। ऋषियों का संदेश है कि तीव्र त्वरा वाली यांत्रिकी (हाई या सुपर टेक्नोलॉजी) का लोक में अति प्रयोग नहीं किया जाना चाहिये अन्यथा यह हाई टेक मृत्यु अर्थात् यमराज (युद्ध, आतंक, एक्सीडेन्ट, क्रूरता) आदि को

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

उत्पन्न करती है। कहा गया है पुराण वेदों की व्याख्या हैं। यहाँ पर वेद के 'तुरश्चिद्' और पुराणों के 'कलियुग' को देखा जाय तो स्पष्ट हो जाता है कि कलियुग (High Tech.) वेद के 'तुरश्चिद्' की ही व्याख्या है, उसी का विस्तार है।

46. संतों और योगियों से आशा (महत्त्व) – हमें निराश होने की आवश्यकता नहीं है, यदि विश्व के महात्मा और योगी अपने-अपने चित्तों का शुद्धिकरण कर राज्य-शरीर के अनुरूप पतंजलि योग सूत्र 'साधन पाद' के सूत्रों को व्यवहार में लाने के उपक्रम में लग जायें तो अवश्य ही विश्व योग सूत्रों (विज्ञान) से आश्चर्यजनक रूप में लाभान्वित हो सकेगा। साधन पाद के सूत्र 30 में बताये गये पाँच 'यंमों' (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह) का पालन सूत्र 31 के अनुरूप जाति, देश, काल और समय की सीमा से परे रहकर व्यापक रूप में पालन किया जाता है तो यम 'महाव्रत' कहे जाते हैं। इस सूत्र ने यह स्पष्ट कर दिया गया है कि योग सार्वभौमिक विज्ञान के नियम हैं, किसी जाति या धर्म से सम्बन्धित नहीं है। योग ब्रह्माण्ड की अध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक टेक्नोलॉजी है। यही बात समाधि पाद के सूत्र एक और दो के द्वारा स्पष्ट कर दी गई है और तदनुरूप उसी व्यवस्था के अनुपालन की धारणा (मन) बनाने पर बल दिया है। इस धारणा का आधार प्रत्येक मनुष्य के चार उद्देश्यों - धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष - की कामना होती है। योगसूत्र, समाधिपाद के सूत्र एक ने योग को 'अनुशासन' अर्थात् किसी भी यांत्रिकी का क्रमबद्ध ज्ञान बताया है। सूत्र दो द्वारा बताया गया है कि 'योग' मानव मात्र की वृत्तियों (मन, इच्छाओं, आवश्यकताओं) में किस प्रकार सामन्जस्य ला सकता है उसका अध्यात्मिक और वैज्ञानिक विवेचन है। सम्पूर्ण विश्व में मनुष्य सहित सभी प्राणियों की वृत्तियाँ एक सी हैं। अतः इन वृत्तियों का अध्ययन सार्वभौमिक है न कि किसी एक जाति या धर्म से है।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

आज जिस प्रकार का योग चल रहा है उसकी क्षमता का लाभ धनी महिषासुरों को मिलता है । धन के अतिरेक में ये अपने खुरों और सींगों से सम्पूर्ण धरती को खोदकर हिला देते हैं । यह पौराणिक कल्पना नहीं है । आज टेक्नोलॉजी के दुरुपयोग से उत्पन्न क्रूरता के महिषासुरों को कोई भी विश्वभर में देख सकता है । आज के धन पशुओं ने टेक्नोलॉजी के मायावी (हाई) स्वरूप को ऐसे ओढ़ रखा है कि जैसे वे ही द्ररिद्रों के भगवान हैं । जिनके हाथ में 'हाईटेक' के महिषासुर का रिमोट है, वे भूल जाते हैं कि वे मनुष्य के रूप में मरणशील महिषासुर हैं, परन्तु कलियुग (हाईटेक) की माया अमर है । वह उस द्रव्य के साथ घुली-मिली रहती है जो स्वयं सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का नियन्ता है । तात्पर्य है कि मनुष्य रूपी महिषासुर पहले हाई-टेक के द्वारा राज्य और विश्व को अपने नियंत्रण में लेता है, फिर उसे आतंक से भर देता है । दूसरे चक्र में यह 'हाई-टेक' स्वयं महिषासुर का चोला पहनकर मनुष्य का चोला पहने महिषासुरों का भी विनाश कर देती है।

हमारे 'योगी' अपनी मलिन दृष्टि के कारण मानुष-महिष और हाई-टेक-महिष के तप के भावी परिणामों को देखने में असमर्थ हैं । पुराणों में पढ़ा होगा कि तप काल में राक्षस भी कुछ मर्यादाओं से बँधे रहते हैं । जब वे अपने तप अर्थात् टेक्नोलॉजी को श्रम द्वारा पूर्ण अवस्था में ले जाते हैं, तो उनके मन में सम्पूर्ण विश्व पर नियंत्रण करने का लोभ छा जाता है । वे सबको अपने आचार-विचार और आदेशों के अनुरूप चलने को बाध्य कर देते हैं । ये महिषासुर लोगों को बाध्य कैसे करते हैं? किसीके मन में यह प्रश्न उठ सकता है ।

सबसे पहले ये हाई-टेक के लाभों का बखान कर लोगों को उसे अपनाने का प्रलोभन देते हैं । जब यह हाई-टेक चलन में आ जाता है तो करोड़ों लोग बेकार हो जाते हैं उनका रोजगार और जीविका छिन जाती है । तब मनरूपी महिष लोभ और लालच के कारण हाई-टेक पर ही निर्भर

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

होकर और अधिक धन एकत्र करने की हविश का शिकार हो जाते हैं। जब लोगों को अपनी बेरोजगारी और भयंकर गरीबी का अहसास होता है तो यही महिषासुर उनमें से किसी एक को नेता बना एक राजनीतिक गिरोह बना देता है। उस गिरोह को सींच-सींचकर सारे उत्पात उत्पन्न कर समाज को उनकी इच्छानुरूप चलने को बाध्य कर देता है। इसे और अधिक स्वयं भी विस्तार से देख लिया जाना चाहिये। किसी भी सत्ताधारी के इस स्वरूप को देखा जा सकता है।

महिषासुरों का यह हाई-टेक तंत्र जब शिथिल होनें लगता है अर्थात् उसके दुष्प्रभावों से अनेक शारीरिक एवं मानसिक बीमारियों से ग्रस्त रहना प्रारंभ कर देता है तो महिषासुर चिंतित होकर कथित योगियों को योग के प्रचार की कमान संभालने का उपक्रम करता है। वह अपने धन-बल के द्वारा वृत्ति विहीन लोगों को योगी का चोला पहनाकर अपने कर्मचारियों के अवसाद को दूर करने की तकनीक खोज लेता है। इनका उद्देश्य मानव सेवा, शांति नहीं वरन् कर्मचारियों के मानसिक अवसाद को दूर कर अपने 'हाई-टेक' की वृद्धि करना होता है। सीधे-सादे योगी कलियुग (हाई-टेक) के महिषासुर की इस माया से अनभिज्ञ रहकर उसी तंत्र को सींचने का कार्य करते हैं, जो विश्व में उस आतंक को ले आता है, जिससे आज वे भी अछूते नहीं हैं। दूसरे शब्दों में हमारे योगी उस मारे हुए शेर की अस्थियों को जोड़कर उसमें प्राण फूंकने का काम कर रहे हैं जो जीवित होकर उन्हें भी फाड़कर खा जायेगा (पंचतंत्र की कथा के अनुरूप)।

बौद्ध कथाओं में ऐसे ही महिषासुरों को अंगुलिमाल कहा गया है। योग का दुरुपयोग तो नहीं हो रहा है, योगियों को इसे देखना चाहिये। हमारे योगी जब स्वयं हजारों हाथों वाले 'है हय' (भरपूर संपत्ति का अतिरेक) क्षत्रियों का रूप धारण कर लिये हैं, तो वे अपने छद्म योग से विश्व में शांति कैसे ला सकते हैं? तात्पर्य है कि योग का मूल आधार 'यम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

और नियम' हैं, जिनमें 'अपरिग्रह' भी एक है । हमारे योगियों के अपरिग्रह स्वरूप को कोई भी उनके द्वारा चलाये जा रहे आश्रमों और बाजार-योग में देख सकता है । ऐसा लगता है, आज का 'योग' कालनेमि और रावण योग की तरह का है । जब योगी विश्वव्यापी अंगुलिमाल को पहचान पाने में असमर्थ हैं तो वे कैसे योगी होंगे, इसके बारे में किसी को संदेह नहीं होना चाहिये । ये योगी पहले तो हाई-टेक (कलियुग) की जय-जयकार करते हैं, जब इसके अतिवाद से मानव त्रस्त हो जाता है तो कहते हैं, इसकी दवा 'योग' है । हम ही उसे दूर कर सकते हैं । यदि ऐसा होता तो अपने समय की हाई-टेक सभ्यताएं नष्ट होती ही नहीं । जब योगी का मन ही मलिन हो तो 'संयुक्त राष्ट्र' क्या करेगा ? वह स्वयं विश्व मन का ऐसा दर्पण है जो हाई-टेक (कलियुग) की कालिमा (विकिरण) से व्याप्त है ।

47. योग और संयुक्त राष्ट्र - भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के प्रयास से संयुक्त राष्ट्र ने 21 जून-2015 को 'अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस' मनाने की घोषणा की है । यह प्रसन्नता की बात है कि संयुक्त राष्ट्र योग के वैज्ञानिक एवं अध्यात्मिक स्वरूप का स्वागत कर रहा है । चिन्ता की बात यह है कि संयुक्त राष्ट्र योग के उस स्वरूप से ही परिचित है, जो अंगुलिमाल टेक्नोलॉजी को ही बल देता है । आज का योग इसी अंगुलिमाल का पोषण कर रहा है । इस पुस्तक में - गहराई में जाकर योग के अध्यात्मिक एवं टेक्नी स्वरूप का विवेचन किया गया है । संयुक्त राष्ट्र (U.N.) को विश्व कल्याण और शांति के हित में इसका गहन अध्ययन करना चाहिये ।

वर्तमान 'योग' 'नट योग' से अधिक कुछ भी नहीं है । इसके लाभ हैं, परन्तु यह स्वयं 'राजयोग' पर आश्रित है । यह 'नटयोग' की आलोचना नहीं समीक्षा है । इसके लाभ हैं, यह मनुष्य की मानसिक वृत्तियों (स्वभाव) में परिवर्तन लाता है, परन्तु यह उसी के लिये लाभप्रद है जो अतिवाद को

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

अपना इष्ट बनाया होता है। प्रत्यक्ष देखें प्रमाण आपके सामने हैं। तात्पर्य है कि यह नटयोग 'राजयोग' के कंधे पर बैठा हुआ योग है, जो 'राजयोग' से वंचित है, उनके लिये यह योग कारगर नहीं होता है।

यथार्थ योग 'नटराज योग' कहलाता है। गीता (9/2) में इसे 'राजविद्या योग' और 'राजगुह्य योग' कहा गया है। पुराणों और उपनिषदों में इसे 'राजयोग' या 'योगराज' कहा गया है। अपने गीता भाष्य में शंकराचार्य ने इस 'राजविद्या योग' को 'ब्रह्म विद्या' भी कहा है। उनके अनुसार राजविद्या अतिशय प्रकाशमान होने के कारण समस्त विद्याओं का राजा है। ब्रह्मविद्या सब विद्याओं में अतिशय देदीप्यमान है, यह प्रसिद्ध है। 'राजगुह्य' की व्याख्या करते हुए उन्होंने लिखा है, यह समस्त गुप्त रखने योग्य भावों का भी राजा है।[1] गीता ने इस 'राज विद्या योग' को अत्यन्त पवित्र करने वाला तथा सर्वोत्तम योग कहा है (गीता 9/2)।

संस्कृत और हिन्दी का 'नट' शब्द वही है जिसे अंग्रेजी में Nut (नट) कहते हैं। किसी भी यांत्रिकी के नट-बोल्ट कसते रहें, वह कुछ काल तक ठीक चलती है। वर्तमान 'योग' इसी का प्रतिनिधि है। 'राजयोग' या 'नटराज योग' ही यथार्थ 'योग' है। इसी कारण इसे सभी प्रकार के योगों का 'राजा' कहा जाता है। 'राजा' कोई श्रेष्ठ व्यक्ति नहीं है। वह अन्य योगों का भी रंजन करने के कारण 'राजा' कहलाता है। वही नट-बोल्ट का भी प्राण है। जो लोग 'नटयोग' को ही राजयोग समझकर इसके लाभों को भुनाने लगते हैं, उनसे राजयोग मीलों दूर होता जाता है। परिणाम में न तो व्यक्ति को शांति मिलती है और न समाज को। व्यवहार में यह योग गलाकाट प्रतिस्पर्धा का स्त्रोत बन जाता है। इसका सीधा सा विज्ञान है। मानसिक और शारीरिक तनाव का कारण हाई-टेक की 'त्वरा' होती है, जब उस पर नियन्त्रण की बातें योगी करते ही नहीं हैं, तो सीमित

---

1. श्रीमद्भगवद् गीता - शांकरभाष्य - गीता प्रेस, गोरखपुर।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सामर्थवाला 'नटयोग' क्या करेगा ? संक्षेप में बताया जाय तो 'राजयोग' वह कौशल है, वह टेक्नोलॉजी है जिसके द्वारा जन-जन तक उसके उपभोग की सामग्री पहुँचती है । इसी राजयोग से प्राणीमात्र का मन परमसत्ता के साथ एकाकार होकर प्राणी को नवीन ऊर्जा से भर देता है । इसी को शांति और सहज जीवन या सहज योग कहा जाता है । जहाँ 'राज' अर्थात् रंजन के साधनों का अभाव होगा, वहाँ 'मन' शांत नहीं रह सकता है । ऐसे में आतंक कैसे चुप बैठ सकता है ? खाली मन शैतान का घर होता है । इसे सम्पूर्ण विश्व जानता है । विद्वानों को समझना चाहिये कि खाली और रिक्त का अर्थ जीवन के साधनों का अभाव है ।

संयुक्त राष्ट्र को समझना चाहिये कि जब हाई-टेक करोड़ों लोगों के रोजगार छीनकर उन्हें खाली बैठा देती है । उनके 'मन' का 'योग' 'जीवन के साधनों' (अन्न आदि) से होता ही नहीं तो उनके 'खाली मन' में शैतान बैठकर आतंक न फैलायेगा तो क्या वह शांति लायेगा? इस प्रश्न का उत्तर स्वयं संयुक्त राष्ट्र को ढूंढना होगा । जब तक वह राजविद्या के राजगुह्य स्वरूप का साक्षात्कार नहीं कर लेता है तब तक विश्व योग के लाभों से वंचित ही रहेगा ।

संयुक्त राष्ट्र को 'नटयोग' और 'नटराजयोग' के अन्तर को गहराई से समझना होगा । योग के यथार्थ स्वरूप का रहस्य और अर्थ क्या है ? इसका विवेचन 'अध्यात्म, विज्ञान, राजयोग = स्वराज में किया गया है । यह मनुष्य के शरीर-ब्रह्माण्ड (पिण्ड शरीर) की वह टेक्नोलॉजी है जिसका अध्ययन कर हम लोक राज्य की टेक्नोलॉजी का निर्धारण कर सकते हैं । आज नहीं तो कल संयुक्त राष्ट्र को इस ईश्वरीय (शाश्वत) टेक्नोलॉजी को समझकर इसको लोक राज्यों के अनुरूप लागू करना होगा। संयुक्त राष्ट्र को ऐसी टेक्नोलॉजी के मानक अपनाने होंगे जो वर्तमान अंगुलिमाल की हाई टेक्नोलॉजी का स्थान ले सके अर्थात् मध्यम

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

मार्ग का अनुकरण कर विश्व के प्रत्येक मानव तक पहुँच सके। तभी विश्व 'सर्वे भवन्ति सुखिनः...' की स्थिति को प्राप्त कर वर्तमान अराजकता से उबर सकता है अन्यथा अराजकता के इस शैतान के कितने रूप हैं, वह किस रूप में किसी के सामने प्रकट होगा, इसको कौन बता सकता है? जिसे यहाँ पर 'राजयोग' कहा जा रहा है उसका वर्णन बाईबल और कुरान-मज़ीद में भी दिया गया है, परन्तु लोग देखते हुए भी देखते नहीं हैं, ये लोग गूंगे और बहरे हैं, ग्रन्थों का इसमें क्या दोष है ? (कुरान 2:18; बाईबल-मत्ती 13:13,14; ऋग्वेद 10:71:4)।

संयुक्त राष्ट्र जी! मैंने अपनी पुस्तकों में अध्यात्म, आत्मा, परमात्मा, धर्म, कलियुग, टेक्नोलॉजी, हाईटेक आदि के अनेक रहस्यों का विवेचन कर यह बताने का प्रयास किया है कि विश्व में शांति और सद्भाव कैसे आ सकता है? इस अध्ययन की प्रयोगशाला ईश्वरीय टेक्नोलॉजी है, जिसे मनुष्य ने नहीं बनाया है। शास्त्रों ने इसी प्रयोगशाला का अध्ययन कर निष्कर्ष निकाले हैं। मैंने केवल उन निष्कर्षों को आज की भाषा में रखने का प्रयास किया है। प्राचीन मनीषियों का निश्चित मत है कि इस मार्ग के अतिरिक्त अन्य कोई मार्ग नहीं है, जिसमें मानव सुख और शांति से रह सके।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

49. लेखन का सार

1. वर्तमान सभी देशों के 'स्वनामी' मूर्धन्य लोगों से आग्रह है कि लोग जिस ढंग से टेक्नोलॉजी का दुरुपयोग कर रहे हैं, उससे अध्यात्म कोसों दूर भाग रहा है, इस पर विचार करें।

2. विद्वानों को अध्यात्म और विज्ञान की टेक्नोलॉज़ी को समझना होगा। इस टेक्नोलॉजी का प्राणी मात्र के मानस पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसका गंभीर अध्ययन करना पड़ेगा।

3. लौकिक (भौतिक) टेक्नोलॉजी के प्रभाव का आकलन करने के लिये हमें शाश्वत ईश्वरीय टेक्नोलॉजी अर्थात् शरीर शास्त्र के साथ तुलनात्मक अध्ययन करना आवश्यक है। शास्त्रों ने इसे विज्ञानमय कोश कहा है।

4. मानव निर्मित भौतिक और ईश्वरीय यांत्रिकी का तुलनात्मक अध्ययन हमें सभी धर्मों के धर्म ग्रन्थों में मिलता है। वेदों से सम्बन्धित सम्पूर्ण साहित्य में यह तुलनात्मक अध्ययन आश्चर्य रूप से सबसे अधिक मिलता है। अध्यात्म और टेक्नोलॉजी के इस सम्बन्ध को स्पष्ट कर पाना बहुत जटिल हैं, क्योंकि इसमें अनेक क्षेत्रों और उनकी पृथक यांत्रिकी और उसके प्रभाव का ज्ञान आवश्यक होता है।

5. विषय की जटिलता को जानते हुए भी मैंने इस पर चलना न छोड़ा। इसके निष्कर्ष निश्चय ही महत्वपूर्ण हैं इसका श्रेय लेखक को नहीं जाता, क्योंकि लेखन काल में मैंने देखा है कि सब कुछ होते हुए भी बहुत सी बातों को देखना मेरे लिये सम्भव नहीं रहा है। उच्च सत्ता जब जितना चाहती है, उसीके अनुरूप उसने मुझे अपने रहस्यों को दिखाया है। ये बहुत थोड़े हैं अन्य हजारों-हजार बहुत से रहस्य हैं, जिनका ज्ञान मुझे भी प्रत्यक्ष में नहीं है, छाया की तरह दीखते हैं, फिर विलीन हो जाते हैं।

6. जो कुछ भी देखा है, वही इसमें लिखा गया है। अतः मनुष्य के

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सन्दर्भ में यह विवेचन सही है । हाँ, दैत्यों और असुरों के लिये ये निष्कर्ष सही नहीं हो सकते हैं, परन्तु यांत्रिकी के स्वरूप को ये भी गलत नहीं कह सकते हैं ।

सभी शरीरों में देव और दानव अपने सूक्ष्म शरीर (जीवाणु अवस्था) में रहते हैं । रस और रसायनों के सूक्ष्म रूपों को जीवनी शक्ति या आत्मा कहा जाता है । शरीर में स्थित देव-दानवों की प्रवृत्तियों (इच्छा, आवश्यकता) से शरीरधारी का समष्टि मन बनता है, इसीको चित्त भी कहते हैं । इस मन का मूल अति सूक्ष्म ऊंर्जा है, अतः इसे भी आत्मा ही कहा जाता है ।

7. यह मनुष्य शरीर इन्हीं देव-दानवों की टेक्नोलॉजी का मूर्त रूप है । 'गुण कर्म विभाग' (गीता 4/13) के अनुरूप जब शरीर में दैवीय गुण प्रधान होते हैं, तो वह देवता जैसे कार्य करता है और जब दैत्य या असुरों के गुण प्रभावी होते हैं, तो वही मनुष्य दैत्य या असुर बन जाता है । यह मानसिक वृत्ति है । देव-दानव अमूर्त मानसिक तरंगें या वृत्तियाँ हैं, इसलिये इनके प्रसार की कोई सीमा नहीं होती है । मनुष्य स्थूल शरीर और 'मन' दोनों को धारण करता है, अतः उसके शरीर की भौतिक सीमाएं होती हैं, अतिवाद उसे मृत्यु की ओर ले जाता है । इसी कारण शरीरधारी मनुष्य को मूर्त और अमूर्त में समन्वय करना होता है अर्थात् उसे मध्यम मार्ग का अनुसरण करना पड़ता है ।

8. यह मध्यम मार्ग यम और नियमों के साथ अनुशासन में रहने से उत्पन्न होता है । पतंजलि ने अपने योगसूत्र में इसी मध्यम मार्ग को 'योग' कहा है, क्योंकि यह वृत्तियों के अतिवाद का शमन (निरोध) करता है । भगवान बुद्ध ने भी मध्यम मार्ग को ही मानव मार्ग कहा है । कुरान मज़ीद में अनेक स्थलों में इसे 'सीधा मार्ग' (2:142;19:36;48:2,20) कहा है ।

9. टेक्नोलॉजी शब्द का प्रयोग बार-बार इसलिये किया गया है,

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

जिससे वर्तमान टेक्नोक्रेट उसे अंग्रेजी का शब्द न समझें । टेकनी (लाठी, छड़ी) या टेक्नी दोनों शब्द भारत की अनेक भाषाओं में प्रचलित हैं । इन्हीं से टेकना लागोस (छ) या टेक्नो लागोस बना है । टेकना + लागोस से ही टेक्ना या टेक्नोलॉजी बनता है । तात्पर्य है कि इस शब्द को विदेशी न समझें । हमारा सम्पूर्ण 'वैदिक वांग्मय' इसी टेकनी से बना है । वाङ् या वांग् का अर्थ शाखा होता है । यह सभी जानते हैं कि 'शाखा' से ही 'टेकनी' बनती है । इससे स्पष्ट है कि हमारा वैदिक वाङ्मय (शाखा अर्थात् टेकनी, टेक्नी) की टेक्नोलॉजी से युक्त (मय) है । शाखाओं की 'टेक' लगाते-लगाते 'कुटी' बन जाती है । पत्र, पुष्प, फल खाने से शरीर-मंदिर बन जाता है । आहार को शरीर में लगाना टेक्नी या टेक्ना लागी है । टेक्नी कैसे लगी ?क्यों लगी ? यह जानने का ज्ञान विज्ञान'लागी' से 'लॉजी' बना दिया गया है । इस तरह शरीर यांत्रिकी के सम्पूर्ण ज्ञान को ही 'टेक्नोलॉजी' कहा जाता है । जो टेक्नीविद और विद्वान अध्यात्म को जानना चाहते हैं, उन्हें 'टेक्नी' के स्वरूप को जानना ही होगा ।

10. आज कलियुग अर्थात् टेक्नोलॉजी के प्रचण्ड ताप से सम्पूर्ण विश्व की मानवता कराह रही है । इसका कारण टेक्नोलॉजी का अतिवाद है । अतः टेक्नोलॉजी या लौकिक यांत्रिकी का निर्माण इस प्रकार किया जाय कि वह मनुष्य के भौतिक एवं अभौतिक दोनों स्वरूपों में समन्वय स्थापित कर उसे मध्यम मार्ग पर चलने का वातावरण निर्मित कर सके । अर्थात् टेक्नोक्रेटों की टेक्नोलॉजी के अतिवाद के पीछे भागने की दैत्य प्रवृत्ति पर नियंत्रण करना होगा ।

11. 'हाई-टेक' निर्माण सदा ही ई-टेक (ईश्वरीय टेक्नी या टेक्नोलॉजी) पर हावी हो जाती है । हाई-टेक कुछ ही वर्षों में 'हाय-टेक' में परिवर्तित हो जाती है । गीता के 'गुण, कर्म, विभाग' का शाश्वत सिद्धान्त इसी बात की व्याख्या करता है । गीता का प्रथम अध्याय इसी हाई-टेक का

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

परिणाम 'हाय-टेक' है, जिसे "विषाद योग' कहा गया है।

12. अपने-अपने समय की 'हाई-टेक' सभ्यतायें 'हाय-टेक' अर्थात् हाय-हाय या विनाश की टेक्नोलॉजी में परिवर्तित हो गयी। मिस्र, यूनान, रोम, बेबीलोन, असीरिया और चीनी सभ्यताएं इसके उदाहरण हैं। 'हाई-टेक' शरीर यांत्रिकी भी महाभारत की 'हाय-टेक' (हाय-हाय टेक्नोलॉजी) में बदल जाती है। जहाँ पर अन्त में युधिष्ठिर स्वयं को मानव कंकालों के ढेर पर बैठा हुआ पाते हैं (शांतिपर्व अ. 7, 27 देखें)।

13. संयुक्त राष्ट्र जी! आप अपने सदस्य राष्ट्रों के टेक्नोक्रेटों से कहें कि 'हाई-टेक' के स्वभाव को जानने के लिये महाभारत आदि ग्रन्थों में वर्णित कलियुग और 'कल्कि' को अवश्य पढ़ें। यह 'कलियुग' ही हाई-टेक्नोलॉजी और उसका प्रभाव है। इसमें जो भी कहा गया है हम उसे स्पष्ट देख रहे हैं।

14. महाभारत, वनपर्व अध्याय 188 और 190 में 'हाई-टेक' के स्वभाव का वर्णन करते हुए कहा गया है -

कलियुग की हाई टेक्नोलॉजी का स्वभाव है कि वह मनुष्यों का कृत्रिम चमक-दमक के प्रति आकर्षण बढ़ा देती है (188/29)। लोगों के आचार-विचार एकदम बदल जाते हैं, प्रलय आने की यह पूर्व सूचना है (188/34)। इस काल में सभी में आपा-धापी (जल्दबाजी) छा जाती है, इससे उनकी धारणा शक्ति (सहनशक्ति) नष्ट हो जाती है (188/32)। राजा अर्थात् प्रजा का रंजन करने वाले शासक पापी एवं झूठे हो जाते हैं (188/35)। ब्राह्मण अर्थात् सबका हित चाहने वाले विद्वान् छली और कपटी हो जाते हें (188/47)। हाई-टेक का स्वभाव होता है कि वह मनुष्यों को 'फास्ट-फूड पैकैट' (दूसरों द्वारा भेजा गया भोजन) खाने को बाध्य कर देता है (188/49)। हाई-टेक बाजार में भंयकर मिलावट और माप तौल में कपट ले आती है (188/53)। नगरों के बाग-बगीचों को उजाड़कर जनता

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

के साथ पाप पूर्ण व्यवहार करना हाई-टेक (कलियुग) का स्वभाव होता है (188/56)। हाई-टेक अपने अंतिम काल में लोगों को एक दूसरे के प्राण लेने का वातावरण बना देती है (190/16-17; 22)।

15. सारे संसार को यह 'हाई-टेक' मलेच्छ बना देती है (महाभा. वन प. 190/29;38)। मलेच्छ का अर्थ कोई जाति विशेष नहीं वरन् जिसकी इच्छा मलिन होती है वही मलेच्छ कहा जाता है। मलिन का अर्थ लूट, भ्रष्टाचार, डकैती, हिंसा, छिनैती द्वारा दूसरे के धन पर अधिकार करना है। जो ऐसे कर्म करने की इच्छा रखता है वही 'मलेच्छ' है।

16. लोगों में बगीचों और वृक्षों को काट देने की प्रवृत्ति कलियुग उत्पन्न कर देता है। सब लोग अपने जीवन के प्रति भयभीत हो जाते हैं (महाभा. वन प. 190/55-56) - आज पर्यावरण के नाश में यही 'हाई-टेक' अपनी विनाशी इच्छा के रूप सर्वत्र हमें दिखाई दे रही है।

17. हाई-टेक युग (कल्कि-काल) में लोग प्रायः दीनों-असहायों तथा विधवाओं का धन हड़प लेते हैं (महाभा. वन प. 190/30) - आज हम इसे प्रत्यक्ष देख सकते हैं। हाई-टेक काल में एक देश दूसरे को ललकारता है। शासक मूर्ख होते हुए भी स्वयं को पंडित मानते हैं (190/32-33) - आज इसे भी हम प्रत्यक्ष देखते हैं कि शासक इतने मूर्ख हो गये हैं कि उन्हें कलियुग (हाई-टेक) की माया दिखाई नहीं देती है।

18. हाई-टेक का स्वभाव है कि वह शासकों को जनता की रक्षा करने से विरत कर देती है, शासकों को लूट और विलासिता के सभी साधन दे देती है। घोर कलियुग में धन और स्त्रियों को बलपूर्वक उठा ले जाने पर भी शासक कुछ नहीं करते हैं, उनके रोने-बिलखने पर भी दया नहीं करते हैं। केवल प्रजा को दण्ड देने में ही हाई-टेक के शासक रूचि रखते हैं (महाभा. वन प. 190/34-35)। विश्व कलियुग (हाई-टेक) के इस अभिशाप को प्रत्यक्ष देख रहा है। इसके मानसिक त्रास से भारत

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

सहित विश्व लबालब भर गया है । जैसा इसमें कहा गया है, भारत सहित सारा विश्व प्रजा को दंडित करने के लिये केवल कानून बना देता है । समस्या निवारण के लिये कुछ नहीं करता है, क्योंकि हाई-प्रौद्योगिकी ने इनको दैत्य बना दिया है और इन्होंने मानव होने का भ्रम पाल रखा है - "भ्रामयन्सर्वभूतानि यंत्रारूढ़ानि मायया" (गीता 18/61) ।

19. कलियुग की समाप्ति के समय शासक सब तरह के उपायों से दूसरों के धन का अपहरण कर लेते हैं (महाभा. वन प. 190/37) - यही 'हाई-टेक' का कमाल है । 11 माह 'सत्ता' बैठी रहती है, मार्च में केवल लूट के लिये ही सड़क आदि स्थानों पर हाई-टेक दिखावे के साथ मशीनें दिखाई देती हैं । पाँच वर्षों तक कोई विकास नहीं होता है, पाँचवें चुनाव वर्ष की समाप्ति पर विकास की लीपा-पोती कर जनता का सब कुछ लूट लिया जाता है । हाई-टेक की माया देखिये कि अगली सरकार भी हाई-टेक के मायाजाल में फंसाकर सब कुछ लूटकर चलती बनती है । हाई-टेक में इसी परंपरा का सदा से निर्वाह होता आया है । इसमें कोई उत्तरदायी नहीं होता है । भारत का संविधान और नियम-कानून पहले से ही 'हाई-टेक' हैं, इनमें किसीको उत्तरदायी नहीं बनाया जा सकता है । यहाँ चलते व्यक्ति को पकड़कर उसे सजा जरूर दिलाई जा सकती है ।

20. जैसा ऊपर कहा गया है, हाई-टेक्नोलॉजी के कौशल का यही परिणाम होता है, जिससे पूरा विश्व कंपायमान हो रहा है । हमारे पुराणों और पंचम वेद महाभारत की भविष्यवाणी पर कौन आश्चर्य नहीं करेगा? हाई-टेक (कलियुग) के बारे में जो कुछ कहा गया है उसे हम सब लोग आज प्रत्यक्ष देख रहे हैं । हाँ ! विश्व के धृतराष्ट्र इसे कैसे देख सकते हैं ? फिर भी वे मानसिक यंत्रणा महसूस करते ही हैं; भले ही दिखावे के लिये ही सही ।

21. महाभारत में महर्षि व्यास भविष्यवाणी करते हैं कि जब

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

'हाई-टेक' (कलियुगी) सभ्यता मनुष्य को दूसरों का विनाश करने वाला क्रूर, भयंकर और हिंसक बना देती है तो समझ लेना चाहिये कि हाई-टेक्नोलॉजी (कलियुग) का अंत आने ही वाला है (वन प.190/62-63)। आज विश्व हिंसा और क्रूरता के तांडव से भर गया है। अध्यात्म और विश्वगुरु का भ्रम (गीता 18/61) पालने वाला भारत भी इस हाई-टेक की क्रूरता से लबालब भर गया है। विश्व हिंसा और अमानवीय क्रूरता को देख रहा है। कुछ देश इस क्रूर हिंसा से प्रत्यक्ष जूझ रहे हैं तो कुछ ने भभकती भट्टी को दिखावे की मिट्टी से ढक रखा है।

22. टेक्नोक्रेटों को यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिये कि टेक्नोलॉजी का विरोध किया जा रहा है। टेक्नीक (माया) के बिना कोई रचना संभव नहीं होती है। यहाँ पर हाई टेक्नोलॉजी के अतिवाद का विरोध है, क्योंकि उसका क्रूरतम चेहरा उसके आकर्षक लाभों में छिपा रहता है जिसे वैज्ञानिक देख नहीं सकते हैं। वे स्वयं को उत्तरदायित्व से मुक्त कर विज्ञान के क्रूर चेहरे को देखने का दायित्व उपभोक्ताओं पर डाल देते हैं। मानवता को हाई-टेक की क्रूरता के हवाले नहीं किया जाना चाहिये। मन्तव्य इतना ही है कि टेक्नोलॉजी को अतिवादी न बनाकर उसे मध्यम मार्गीय बनाना चाहिये। उसे 'ई-टेक' (ईश्वरीय टेक्नोलॉजी) पर हावी नहीं होने देना चाहिये।

23. संयुक्त राष्ट्र जी ! आपके टेक्नोक्रेट मानें या न मानें, गीता में भगवान कृष्ण कहते हैं कि सभी प्रकार की यांत्रिकी के चार आयाम होते हैं, इसे 'चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टा गुणकर्म विभागशः' के रूप में बताया गया है। शास्त्रों में यांत्रिकी का पाँचवां आयाम 'पंचमों निषादः' कहा गया है। 'निषाद' का अर्थ होता है, जिसे साधा नहीं जा सकता है - जिस पर किसी का नियंत्रण नहीं है, वही 'निषाद' है, अर्थात् 'महाकाल' का नाम ही निषाद है जो सबको निगल जाता है। विज्ञान की शब्दावली में कहें तो महाकाल या निषाद time (टाइम) है, विभागशः क्वान्टम् quantum (मात्रा है), कर्म

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

vilocity, (गति) है, गुण matter (मैटर-द्रव्य) है ।

24. इस सबका तात्पर्य निकलता है कि मनुष्य स्वभाव और कर्मों का नियन्त्रण शरीर यांत्रिकी के इन पाँचों आयामों के अनुरूप होता है । आज विश्व में जैसा राक्षसी कृत्य मनुष्यों द्वारा किया जा रहा है वह इसी 'हाई-टेक' के कारण है, क्योंकि इसके 'गुण, कर्म और विभागशः' पर कहीं कोई नियन्त्रण नहीं है ।

25. अन्त में कलियुग में 'कल्कि' अवतार की इस चेतावनी पर विश्व के टेक्नोक्रेटों और उसका दुरुपयोग करने वाले सत्तामय शासकों को अवश्य सुनना चाहिये, जिसमें कहा गया है - 'हाई-टेक' (कलि) के अतिवादी स्वचालन (automation) से अवतरित 'कल्कि' भगवान जन-सेवकों के वेष में छिपे दस्यु शासकों का संहार करेंगे (श्रीमद्भा. 12/2/20)। वर्तमान हाई-टेक्नोलॉजी और टेक्नोक्रेटों का भी वैसा ही हश्र होने वाला है । काल को अपनी मुट्ठी में कर लेने की इच्छा करने वाले 'कालयवन' का हश्र भी ऐसा ही हुआ था । काल यवन ने भी हाई-टेक्नोलॉजी के मायापति कृष्ण को बंदी बना लेना चाहा था तब उसे भस्म होना पड़ा था (देखें, श्रीमद्भा. दशम स्कन्ध (उ.) अध्याय 11) । ठीक वैसी ही स्थिति आज सबके सामने है जो सभी प्रकार की 'हाई-टेक' (मायापति की माया) को अपनी मुट्ठी में कर लेना चाहते हैं । अवश्य ही सभी उसी कालयवन की तरह भस्मीभूत होने की ओर अग्रसर हो रहे हैं। श्रीमद्भागवत का विश्व को यही संदेश है कि अतिवाद को छोड़ें । टेक्नोविदों को इस संदेश पर किसी भी प्रकार का अविश्वास नहीं करना चाहिये । ठीक यही निष्कर्ष और भविष्यवाणी पहले लिखी गयी मेरी पुस्तक "अध्यात्म, विज्ञान, राजयोग = स्वराज" में भी है ।

।। ॐ शान्तिः ।।

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi

CC0. In Public Domain, Digitizagtion by eGangotri

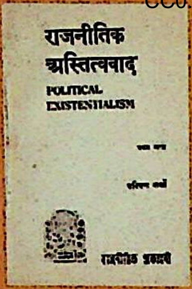

लेखक की रचनाएँ

1. राजनीतिक अस्तित्ववाद
2. परमाणु, मन और विज्ञान
3. भारत के लोगों का संविधान और दर्पण
4. शब्द विज्ञान
(विश्व भाषाओं की कुमाउनी आधारित व्युत्पत्ति) प्रथम खण्ड
5. हिन्द स्वराज के सौ वर्ष
6. अध्यात्म, विज्ञान, राजयोग = स्वराज

राजनीतिक अकादमी, वाराणसी

Dr. Urmila Sharma Collection, Varanasi